

ISSN No. 3048-8664



GLOCAL
UNIVERSITY
SHAPING GLOBAL MINDS

ग्लोकल दृष्टि

(नवीन शोध व रचना धर्मिता को समर्पित त्रैमासिक पत्रिका)

A Peer-Reviewed Multidisciplinary Research Journal

वर्ष-2 अंक: 3-4

सितम्बर-दिसम्बर 2025

ग्लोकल विश्वविद्यालय, दिल्ली-यमुनोत्री मार्ग, मिर्जापुर पोल
सहारनपुर-247121 उत्तर प्रदेश, भारत



ग्लोकल दृष्टि

(नवीन शोध व रचना धर्मिता को समर्पित त्रैमासिक पत्रिका)

वर्ष-2 अंक: 3-4 सितम्बर-दिसम्बर 2025

संरक्षक

श्री सैय्यद निजामुद्दीन
ए०पी०सी० (फाइनेंस)

प्रो. (डॉ.) ओम कुमार हर्ष
ए०पी०सी० (एकेडमी)

प्रो. (डॉ.) मंजू गुप्ता
वाइस चांसलर

सलाहकार संपादक मंडल

प्रो० उमापति दीक्षित, (डी० लिट०)

अध्यक्ष, नवीनीकरण एवं भाषा प्रसार विभाग, केन्द्रीय हिंदी संस्थान, आगरा

डॉ० अखिलेश मिश्रा

प्रशासनिक अधिकारी, उ० प्र० शासन

डॉ० जयंती प्रसाद नौटियाल

महानिदेशक (अध्यक्ष), वैश्विक हिंदी शोध संस्थान, देहरादून

प्रो. (डॉ.) जान फिनबे

प्रतिकूलपति, ग्लोकल विश्वविद्यालय, सहारनपुर

प्रो० विभा अग्निहोत्री

अध्यक्ष, मानवशास्त्र विभाग, एन० एस० एन० पी० जी० कॉलेज, लखनऊ

प्रो० सत्या मिश्रा

समाजशास्त्र विभाग, नारी शिक्षा निकेतन पी० जी० कॉलेज

सम्पादक मंडल

प्रधान सम्पादक

प्रो. शोभा त्रिपाठी, प्रोफेसर, हिंदी विभाग, ग्लोकल विश्वविद्यालय, सहारनपुर
shobha.tripathi@theglocaluniversity.in

सह-सम्पादक

डॉ. बिलाल अहमद, असिस्टेंट प्रोफेसर, ग्लोकल विश्वविद्यालय, सहारनपुर
bilal.ahmad@theglocaluniversity.in

प्रो. (डॉ.) चंद्र प्रकाश वर्मा, प्रोफेसर, ग्लोकल स्कूल ऑफ साइंस एण्ड कॉमर्स,
ग्लोकल विश्वविद्यालय, सहारनपुर chandra.verma@theglocaluniversity.in

डॉ. अतीक-उर-रहमान, प्रोफेसर, ग्लोकल कॉलेज ऑफ यूनानी मेडिकल साइंस एंड रिसर्च
सहारनपुर atiqurrahman@unanimedicalcollege.in

सलमान खान, असिस्टेंट प्रोफेसर, ग्लोकल यूनिवर्सिटी फार्मैसी कॉलेज, सहारनपुर
salman@theglocaluniversity.in

डॉ. आतिका बानो, एसोसिएट प्रोफेसर, ग्लोकल यूनिवर्सिटी फार्मैसी कॉलेज
सहारनपुर aateka@theglocaluniversity.in

डॉ. मौ. कैफ उल इस्मान, डीन, ग्लोकल स्कूल ऑफ एजुकेशन, ग्लोकल विश्वविद्यालय
dean.education@theglocaluniversity.in

श्रीमती अंकिता गर्ग, असिस्टेंट प्रोफेसर, स्कूल ऑफ कंप्यूटर एंड इनफॉर्मेशन साइंस
ग्लोकल विश्वविद्यालय, सहारनपुर ankita.garg@theglocaluniversity.in

श्री गुरदीप पंवार, असिस्टेंट प्रोफेसर, पैरामेडिकल कॉलेज, ग्लोकल विश्वविद्यालय
सहारनपुर gurdeep@theglocaluniversity.in

श्री कुलदीप, असिस्टेंट प्रोफेसर, ग्लोकल कॉलेज ऑफ नर्सिंग एंड रिसर्च सेंटर,
ग्लोकल विश्वविद्यालय, सहारनपुर kuldeep@theglocaluniversity.in

प्लेगेरिज्म इंचार्ज

श्री मुकेश बिस्वास, विभागाध्यक्ष, आई.टी. ग्लोकल विश्वविद्यालय, सहारनपुर
mukesh@theglocaluniversity.in

शोध पत्रिका के विषय में

ग्लोकल दृष्टि, ग्लोकल विश्वविद्यालय, दिल्ली-यमुनोत्री मार्ग, मिर्जापुर पोल, सहारनपुर- 247121 की त्रैमासिक, बहुविषयक शोध पत्रिका है। यह विश्वविद्यालय यूजीसी अधिनियम की धारा 22 के तहत यूजीसी द्वारा मान्यता प्राप्त और यूनिवर्सिटी अधिनियम 2011 (यू.पी. अधिनियम संख्या 2, 2012) द्वारा स्थापित (जैसा कि उत्तर प्रदेश विधानमंडल द्वारा पारित किया गया है)। ग्लोकल विश्वविद्यालय के लगभग 350 एकड़ के विशाल परिसर में वर्तमान में आठ प्रमुख स्कूल हैं। जिनमें 55 से अधिक स्नातक, स्नातकोत्तर व पेशेवर पाठ्यक्रम अत्यधिक प्रतिष्ठित, अनुभवी, एवं योग्य संकाय सदस्यों द्वारा संचालित किये जाते हैं। विश्वविद्यालय में विश्वस्तरीय बुनियादी ढांचे में अत्याधुनिक सुविधाएं, सुसज्जित छात्रावास, जिम आदि अनेक सुविधाएं उपलब्ध हैं।

ग्लोकल दृष्टि का उद्देश्य हिंदी भाषा में उच्च कोटि के लेख प्रकाशित करना है। वैश्वीकरण के युग में शोध अध्ययन हेतु बहुविषयक उपागम को सबसे अधिक उपयुक्त माना गया है। अतः ग्लोकल दृष्टि को एक बहुविषयक शोध पत्रिका के रूप में वर्ष 2024 में प्रारम्भ किया गया था। वर्ष 2025 से यह त्रैमासिक शोध पत्रिका के रूप में प्रकाशित हो रही है। प्राप्त शोध लेखों की समीक्षा विषय विशेषज्ञों से कराने के पश्चात इन्हें प्रकाशन हेतु चयनित किया जाता है।

फार्म 'बी'

सम्पादक का नाम, राष्ट्रीयता व पता :	प्रो. शोभा त्रिपाठी, भारतीय, एसोसिएट प्रोफेसर (हिंदी), ग्लोकल विश्वविद्यालय, सहारनपुर
प्रकाशक का नाम, राष्ट्रीयता व पता:	ग्लोकल विश्वविद्यालय, दिल्ली-यमुनोत्री मार्ग मिर्जापुर पोल, सहारनपुर-247121
अवधि	त्रैमासिक
प्रकाशन का स्थान व पता	ग्लोकल विश्वविद्यालय, दिल्ली-यमुनोत्री मार्ग मिर्जापुर पोल, सहारनपुर-247121
स्वामी का नाम, राष्ट्रीयता व पता	ग्लोकल विश्वविद्यालय, दिल्ली-यमुनोत्री मार्ग, मिर्जापुर पोल, सहारनपुर-247121
लेजर टाइप सैटिंग	ई.टी.डी.आर. कम्प्यूटर्स, बी-1205ए, के. एम. रेजिडेन्सी, राज नगर एक्सटेंशन, गाजियाबाद-201017
मुद्रक का नाम व पता	साई बाबा प्रिंटिंग प्रेस, चिलकाना रोड, उत्तरी कृष्णा नगर सहारनपुर-247001, भारत
वैबसाइट	glocaluniversity.edu.in

ग्लोकल दृष्टि *GLOCAL DRISHTI*

(नवीन शोध व रचना धर्मिता को समर्पित त्रैमासिक पत्रिका)

A Peer-Reviewed Multidisciplinary Research Journal)

आई.एस.एस.एन. संख्या: 3048-8664

वर्ष : 2

अंक: 3-4

सितम्बर-दिसम्बर 2025

अनुक्रमणिका

सम्पादकीय

शोध लेख

भारतीय ज्ञान परम्परा – वैदिक काल से समकालीन संदर्भों तक एक समग्र और आलोचनात्मक अध्ययन डॉ. हरिस उमर, डॉ. मो. वाजिद खान, ज्योति पाण्डेय	7
सौन्दर्य शास्त्र और प्रसाद का साहित्य संतोष कुमारी, डॉ. शोभा त्रिपाठी	17
भारतीय ज्ञान परम्पराओं में आयुर्वेद सुश्री अंजू बाला	23
भारतीय ज्ञान परंपरा एवं विज्ञान फॉर विकसित भारत 2047 प्रो. (डॉ.) सत्या मिश्रा	37
भारत में विधिक साक्षरता : एक आवश्यक सामाजिक पहल और उसके समक्ष चुनौतियाँ डॉ. वैशाली, प्रवीण कुमार	41
बालश्रम के सम्पूर्ण उन्मूलन के लिए अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा किए गए प्रयासों का सामाजिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन (नोरे मनव्वर, डॉ. अतिका बानो)	45
आधुनिकता एवं पराधीनता की कसौटी माद्री कोहली कृत महासमर के संदर्भ में मृत्युंजय कुमार	57
हिंदी पत्रकारिता के प्रारंभिक चरण (रीना सती, डॉ. शोभा त्रिपाठी)	61
विश्वविद्यालय रिपोर्ट	69

पियर रिव्यू कमेटी (Peer Review Committee)

1. श्री एन. एच. रिजवी, पूर्व विशेष सचिव, उत्तर प्रदेश शासन ।
2. डॉ. शिवानी तिवारी, रजिस्ट्रार, ग्लोकल विश्वविद्यालय, सहारनपुर ।
3. प्रो. वीरेन्द्र पाल सिंह, पूर्व अध्यक्ष, वैश्वीकरण एवं विकास अध्ययन केन्द्र
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश ।
4. प्रो. शशांक शुक्ला, (हिन्दी विभाग), उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय, देहरादून ।
5. प्रो. वंदना उप्रेती, राजनीति विभाग, नारी शिक्षा निकेतन, पी.जी. कॉलेज,
लखनऊ ।

संपादकीय...



डॉ. शोभा त्रिपाठी

भारतीय ज्ञान प्रणाली परंपरा, प्रासंगिकता और भविष्य की दिशा

वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में जब मानवता विज्ञान, तकनीक और कृत्रिम बुद्धिमत्ता के अभूतपूर्व युग में प्रवेश कर चुकी है, तब यह प्रश्न स्वाभाविक है कि क्या केवल भौतिक प्रगति ही मानव जीवन को पूर्णता प्रदान कर सकती है?

उत्तर स्पष्ट है-नहीं। मानव जीवन की सार्थकता उसके नैतिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और सामाजिक संतुलन में निहित है। यही संतुलन भारतीय ज्ञान प्रणाली (Indian Knowledge System) का मूलाधार है। यह केवल ग्रंथों का संग्रह नहीं, बल्कि जीवन-दृष्टि, आचरण-नीति और लोकमंगल की समन्वित परंपरा है।

भारतीय ज्ञान परंपरा का प्रारंभ वैदिक साहित्य से माना जाता है। वेद मानव सभ्यता के प्राचीनतम ज्ञान-स्रोत हैं। जिनमें प्रकृति, देवत्व, समाज और ब्रह्मांड के रहस्यों का सूक्ष्म विवेचन मिलता है। उपनिषद में आत्मा और परमात्मा के संबंध का गूढ़ दर्शन है, जो मनुष्य को अहं ब्रह्मास्मि की अनुभूति तक ले जाता है। यह ज्ञान मनुष्य को बाह्य जगत के साथ-साथ अंतर्मन की यात्रा भी कराता है।

इसी प्रकार रामायण और महाभारत केवल धार्मिक आख्यान नहीं हैं, अपितु आदर्श शासन, कर्तव्यबोध, नीति, धर्मसंकट और मानवीय संबंधों की जटिलताओं का व्यावहारिक पाठ प्रस्तुत करते हैं। 'धर्म' का अर्थ यहाँ संकीर्ण धार्मिकता नहीं, बल्कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में संतुलन, न्याय और उत्तरदायित्व है।

भारतीय ज्ञान प्रणाली का वैज्ञानिक पक्ष भी अत्यंत समृद्ध है। आयुर्वेद में चरक ने शरीर, मन और प्रकृति के सामंजस्य पर आधारित चिकित्सा-दृष्टि प्रदान की, जबकि सुश्रुत ने शल्य चिकित्सा के क्षेत्र में अद्वितीय योगदान दिया। व्याकरण के क्षेत्र में पाणिनि की अष्टाध्यायी भाषा-विज्ञान का अनुपम उदाहरण है, जो आज भी आधुनिक भाषाविज्ञानियों को चकित करती है। गणित और ज्योतिष में शून्य, दशमलव प्रणाली तथा ग्रह-गति के सूक्ष्म अध्ययन भारतीय मेधा के सशक्त प्रमाण हैं।

भारतीय शिक्षा-दर्शन में 'गुरुकुल' परंपरा केवल ज्ञान-प्रदान की प्रणाली नहीं थी, बल्कि व्यक्तित्व-निर्माण का माध्यम थी। वहाँ शिक्षा का उद्देश्य सर्वांगीण विकास था : शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक

और आध्यात्मिक। आज की प्रतिस्पर्धात्मक शिक्षा में जब मूल्य-बोध का संकट दिखाई देता है, तब भारतीय ज्ञान प्रणाली पुनः प्रासंगिक प्रतीत होती है।

समकालीन संदर्भ में University Grants Commission तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अंतर्गत भारतीय ज्ञान परंपरा को पाठ्यक्रमों में समाहित करने का प्रयास यह संकेत देता है कि राष्ट्र अपनी जड़ों की ओर पुनरागमन कर रहा है। यह केवल सांस्कृतिक आग्रह नहीं, बल्कि आत्मनिर्भर बौद्धिक विकास की अनिवार्यता है। भारतीय चिंतन 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना से ओतप्रोत है। आज जब विश्व पर्यावरण-संकट, युद्ध-आशंकाओं और सांस्कृतिक विखंडन से जूझ रहा है, तब भारतीय दृष्टि का 'ऋत' और संतुलन का सिद्धांत वैश्विक समाधान प्रस्तुत करता है। प्रकृति को माता मानने की परंपरा हमें पर्यावरण संरक्षण का नैतिक आधार प्रदान करती है। निःसंदेह, भारतीय ज्ञान प्रणाली को केवल अतीत की स्मृति बनाकर नहीं रखा जा सकता। आवश्यकता है कि इसे आधुनिक अनुसंधान, विज्ञान, प्रौद्योगिकी और सामाजिक विज्ञानों के साथ समन्वित कर व्यावहारिक रूप में विकसित किया जाए। प्राचीन ग्रंथों का पुनर्पाठ, प्रामाणिक अनुवाद, तुलनात्मक अध्ययन और नवीन प्रयोग-ये सभी इस दिशा में आवश्यक कदम हैं।

अंततः, भारतीय ज्ञान प्रणाली आत्मा से समाज और समाज से विश्व तक की यात्रा है। यह मनुष्य को केवल कुशल पेशेवर नहीं, बल्कि संवेदनशील, उत्तरदायी और संतुलित नागरिक बनाती है। यदि हम इसे सम्यक् रूप में आत्मसात कर सकें, तो यह राष्ट्रीय पुनर्जागरण के साथ-साथ वैश्विक समरसता की भी आधारशिला सिद्ध होगी।

प्रो. (डॉ०) शोभा त्रिपाठी

प्रधान संपादक

ग्लोकल दृष्टि

आईएसएसएन नं. 3048-8664

ग्लोकल दृष्टि GLOCAL DRISHTI

वर्ष 2, अंक: 3-4, सितम्बर-दिसम्बर 2025, पृष्ठ 7-16

भारतीय ज्ञान परंपरा: वैदिक काल से समकालीन संदर्भों तक एक समग्र एवं आलोचनात्मक अध्ययन

डॉ. हारिस उमर, डॉ. मोहम्मद वाज़िद खान, ज्योति पाण्डेय

सार

यह शोध-पत्र भारतीय ज्ञान परंपरा का वैदिक काल से समकालीन युग तक एक समग्र, ऐतिहासिक एवं आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। भारतीय ज्ञान परंपरा विश्व की प्राचीनतम, सतत एवं बहुआयामी ज्ञान प्रणालियों में से एक है, जिसने दर्शन, विज्ञान, गणित, चिकित्सा, योग, समाज और नैतिकता जैसे विविध क्षेत्रों में मानव सभ्यता को दिशा प्रदान की है। यह अध्ययन वैदिक साहित्य, उपनिषदिक चिंतन, षड्दर्शन, बौद्ध-जैन परंपराओं, आयुर्वेद, योग तथा भारतीय विज्ञान-गणितीय योगदानों की विश्लेषणात्मक समीक्षा करता है तथा औपनिवेशिक काल में हुए ज्ञान अवमूल्यन की आलोचनात्मक पड़ताल करता है। साथ ही, समकालीन वैश्विक समस्याओं जैसे पर्यावरण संकट, मानसिक तनाव, नैतिक विघटन और असंतुलित विकास के संदर्भ में भारतीय ज्ञान परंपरा की प्रासंगिकता को रेखांकित किया गया है। शोध-पत्र यह प्रतिपादित करता है कि भारतीय ज्ञान परंपरा केवल अतीत की सांस्कृतिक धरोहर नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए एक व्यवहारिक, मानव-केंद्रित एवं नैतिक विकास मॉडल प्रस्तुत करती है। विवेकपूर्ण और आलोचनात्मक दृष्टि के साथ इसका पुनर्पाठ आधुनिक समाज के लिए संतुलन, सह-अस्तित्व और समग्र कल्याण का मार्ग प्रशस्त करता है।

मुख्य शब्द - भारतीय ज्ञान परंपरा, वैदिक एवं उपनिषदिक चिंतन, भारतीय दर्शन एवं विज्ञान, योग और आयुर्वेद, समकालीन प्रासंगिकता

भूमिका

भारतीय ज्ञान परंपरा विश्व की सबसे प्राचीन, सतत और समग्र ज्ञान प्रणालियों में से एक मानी जाती है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता इसकी अखंड निरंतरता है, जो वैदिक काल से लेकर आधुनिक भारत तक स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। विश्व की अनेक प्राचीन सभ्यताओं - जैसे मिस्र, मेसोपोटामिया या यूनान की ज्ञान परंपराएँ समय के साथ समाप्त या सीमित हो गईं, जबकि भारतीय ज्ञान परंपरा निरंतर विकसित होती रही और नए संदर्भों के अनुसार स्वयं को ढालती रही।

डॉ. हारिस उमर

असिस्टेंट प्रोफेसर, शिब्ली नेशनल कॉलेज, महाराजा सुहेलदेव विश्वविद्यालय, आजमगढ़, उत्तर प्रदेश

डॉ. मोहम्मद वाज़िद खान

असिस्टेंट प्रोफेसर, ग्लोकल लॉ स्कूल, ग्लोकल विश्वविद्यालय, सहारनपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

ज्योति पाण्डेय

एल. एल. एम., शिब्ली नेशनल पी.जी. कॉलेज, महाराजा सुहेलदेव विश्वविद्यालय, आजमगढ़, उत्तर प्रदेश

यह परंपरा केवल धार्मिक या आध्यात्मिक चिंतन तक सीमित नहीं रही, बल्कि दर्शन, विज्ञान, गणित, चिकित्सा, भाषा, शासन, समाज और पर्यावरण जैसे विविध क्षेत्रों में व्यवस्थित रूप से विकसित हुई। भारतीय ज्ञान परंपरा की यह बहुविषयक प्रकृति इसे एक समग्र ज्ञान प्रणाली बनाती है, जहाँ मानव जीवन के भौतिक और आध्यात्मिक दोनों पक्षों को समान महत्व दिया गया।

ऋग्वेद का प्रसिद्ध उद्घोष "आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः"

भारतीय चिंतन की मूल आत्मा को प्रकट करता है। इसका तात्पर्य है कि श्रेष्ठ विचार सभी दिशाओं से स्वीकार किए जाएँ। यह उद्घोष इस बात का प्रमाण है कि भारतीय ज्ञान परंपरा मूलतः उदार, समावेशी और संवादप्रधान रही है। यहाँ ज्ञान को किसी एक मत, संप्रदाय या विचारधारा में बाँधने के बजाय विविध दृष्टिकोणों के सह-अस्तित्व को स्वीकार किया गया¹।

भारतीय चिंतन में ज्ञान का उद्देश्य केवल वस्तुनिष्ठ जानकारी प्राप्त करना नहीं माना गया। ज्ञान को केवल बौद्धिक उपलब्धि नहीं, बल्कि आत्मबोध, सामाजिक संतुलन और मानव कल्याण का साधन समझा गया। इसी कारण भारतीय परंपरा में ज्ञान और नैतिकता के बीच गहरा संबंध स्थापित किया गया। ऐसा ज्ञान, जो समाज में असंतुलन या अहंकार को बढ़ाए, उसे अधूरा या अपूर्ण माना गया।

आधुनिक विश्व आज तकनीकी प्रगति के चरम पर होने के बावजूद पर्यावरण संकट, मानसिक तनाव, नैतिक विघटन और सामाजिक असमानता जैसी गंभीर समस्याओं से जूझ रहा है। ऐसे समय में भारतीय ज्ञान परंपरा को केवल अतीत की सांस्कृतिक धरोहर के रूप में नहीं, बल्कि भविष्य के लिए एक व्यवहारिक और मानवीय समाधान के रूप में देखा जा रहा है²।

2. भारतीय ज्ञान परंपरा की आधारशिला

भारतीय ज्ञान परंपरा की आधारशिला मुख्य रूप से अनुभव, तर्क और नैतिकता पर आधारित है³। यहाँ ज्ञान को व्यवहार से अलग नहीं माना गया। भारतीय दृष्टि में वही ज्ञान सार्थक है जो जीवन में उतर सके और मानव को बेहतर मनुष्य बनने में सहायता करे।

भारतीय परंपरा का प्रसिद्ध सिद्धांत - "सा विद्या या विमुक्तये"

इस बात को स्पष्ट करता है कि विद्या का अंतिम उद्देश्य मानव को अज्ञान, भय और दुःख से मुक्त करना है। इस दृष्टि से भारतीय ज्ञान परंपरा केवल सूचना-प्रधान नहीं, बल्कि मुक्ति-केंद्रित है। यहाँ मुक्ति का अर्थ केवल आध्यात्मिक मोक्ष नहीं, बल्कि सामाजिक, मानसिक और नैतिक बंधनों से भी मुक्ति है।

भारतीय ज्ञान परंपरा में ज्ञान को कभी भी एकांगी नहीं माना गया। इसमें श्रुति, स्मृति, दर्शन, शास्त्र और लोकज्ञान सभी को समान महत्व दिया गया।

- श्रुति ने सार्वभौमिक और दार्शनिक सत्य प्रदान किए
- स्मृति ने इन सत्यों को सामाजिक जीवन से जोड़ा
- दर्शन ने तर्क और विवेक का आधार दिया
- शास्त्र ने ज्ञान को व्यवस्थित और वैज्ञानिक रूप प्रदान किया
- लोकज्ञान ने अनुभव आधारित व्यावहारिक बुद्धि को संरक्षित रखा

डॉ. हारिस उमर, डॉ. मोहम्मद वाज़िद खान, ज्योति पाण्डेय

इस बहुस्तरीय संरचना के कारण भारतीय ज्ञान परंपरा केवल अभिजात वर्ग तक सीमित नहीं रही, बल्कि जनसामान्य के जीवन का भी अंग बनी रही⁴।

एक अन्य महत्वपूर्ण आधार नैतिकता है। भारतीय ज्ञान परंपरा में ज्ञान को नैतिक उत्तरदायित्व से अलग नहीं किया गया। ज्ञान का उपयोग यदि समाज के अहित में हो, तो उसे विद्या नहीं माना गया। यही कारण है कि भारतीय चिंतन में धर्म, करुणा और कर्तव्य को ज्ञान के साथ जोड़ा गया।

3. वैदिक काल और ज्ञान परंपरा की आधारशिला

वैदिक काल भारतीय ज्ञान परंपरा का प्रारंभिक, आधारभूत और निर्णायक चरण माना जाता है। इस काल में ज्ञान का सृजन, संरक्षण और प्रसार मुख्यतः मौखिक परंपरा के माध्यम से हुआ। गुरु-शिष्य परंपरा के अंतर्गत मंत्रों का शुद्ध उच्चारण और स्मरण अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया, जिससे ज्ञान की प्रामाणिकता बनी रही।

चारों वेद ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद – इस काल की बौद्धिक चेतना को प्रतिबिंबित करते हैं। ये वेद केवल धार्मिक ग्रंथ नहीं हैं, बल्कि तत्कालीन समाज की वैज्ञानिक, सामाजिक और दार्शनिक समझ को भी दर्शाते हैं।

ऋग्वेद विश्व का प्राचीनतम ज्ञात ग्रंथ माना जाता है। इसमें प्राकृतिक शक्तियों – सूर्य, अग्नि, वायु, जल का वर्णन देवताओं के रूप में किया गया है। इसका उद्देश्य प्रकृति की पूजा मात्र नहीं, बल्कि प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करना था। ऋग्वेद में सृष्टि की उत्पत्ति, ब्रह्मांड की संरचना और मानव कर्तव्यों पर गंभीर चिंतन मिलता है। इसमें खगोल विज्ञान, कृषि चक्र और पर्यावरणीय संकेत भी पाए जाते हैं, जो वैदिक ज्ञान की वैज्ञानिक प्रवृत्ति को दर्शाते हैं⁵।

यजुर्वेद कर्मकांड और सामाजिक अनुशासन पर केंद्रित है। इसमें यज्ञ, अनुष्ठान और सामाजिक कर्तव्यों का वर्णन मिलता है। इसका उद्देश्य समाज में अनुशासन, सहयोग और सामूहिक उत्तरदायित्व की भावना विकसित करना था।

सामवेद भारतीय ज्ञान परंपरा में संगीत और सौंदर्यबोध के महत्व को स्थापित करता है। मंत्रों का संगीतमय रूप यह दर्शाता है कि भारतीय चिंतन में कला और भावना को भी ज्ञान का अभिन्न अंग माना गया।

अथर्ववेद वैदिक ज्ञान का सबसे व्यावहारिक पक्ष प्रस्तुत करता है। इसमें रोग, औषधि, मानसिक स्वास्थ्य, सामाजिक समस्याएँ और दैनिक जीवन से जुड़ा ज्ञान मिलता है। यह वेद सिद्ध करता है कि वैदिक ज्ञान केवल आध्यात्मिक नहीं, बल्कि सामाजिक और वैज्ञानिक भी था⁶।

इस प्रकार वैदिक काल में भारतीय ज्ञान परंपरा की वह नींव पड़ी, जिस पर आगे चलकर उपनिषद, दर्शन, विज्ञान और सामाजिक चिंतन का विशाल भवन निर्मित हुआ।

4. उपनिषदिक चिंतन : आत्मबोध का ज्ञान

उपनिषद भारतीय ज्ञान परंपरा को दार्शनिक गहराई और बौद्धिक परिपक्वता प्रदान करते हैं। यदि वैदिक साहित्य में प्रकृति, देवताओं और कर्मकांड पर बल दिखाई देता है, तो उपनिषदों में आंतरिक चेतना, आत्मानुभूति और सत्य की खोज प्रमुख विषय बनकर उभरते हैं। इस दृष्टि से उपनिषद भारतीय ज्ञान परंपरा में बाह्य से आंतरिक यात्रा का प्रतिनिधित्व करते हैं।

उपनिषद् शब्द का शाब्दिक अर्थ है गुरु के समीप बैठकर प्राप्त किया गया ज्ञान। यह संकेत करता है कि उपनिषदिक ज्ञान केवल ग्रंथों के अध्ययन से नहीं, बल्कि संवाद, प्रश्नोत्तर और आत्मचिंतन से विकसित होता है। यहाँ ज्ञान कोई तैयार उत्तर नहीं, बल्कि खोज की प्रक्रिया है। इसी कारण उपनिषदों में "मैं कौन हूँ?", "यह जगत क्या है?", "जीवन और मृत्यु का अर्थ क्या है?" जैसे गहरे प्रश्न उठाए गए हैं।

उपनिषदिक चिंतन का केंद्रीय सिद्धांत आत्मा और ब्रह्म की एकता है। इसे महावाक्यों के माध्यम से स्पष्ट किया गया है—

"अहं ब्रह्मास्मि", "तत्त्वमसि" और "प्रज्ञानं ब्रह्म"।

इन महावाक्यों का तात्पर्य यह है कि सत्य किसी बाहरी सत्ता में नहीं, बल्कि स्वयं मनुष्य के भीतर निहित है। यह विचार भारतीय ज्ञान परंपरा को द्वैत से अद्वैत की ओर ले जाता है।

उपनिषदों में ज्ञान को प्रत्यक्ष अनुभव (अनुभूति) से जोड़ा गया है। यहाँ केवल बौद्धिक समझ को पर्याप्त नहीं माना गया। जब तक सत्य का अनुभव न हो, तब तक ज्ञान अधूरा माना गया। यह दृष्टिकोण आधुनिक ज्ञानमीमांसा से भी मेल खाता है, जहाँ प्रत्यक्ष अनुभव को ज्ञान का आधार माना जाता है।

उपनिषदिक चिंतन का एक महत्वपूर्ण पक्ष इसका मानव-केंद्रित दृष्टिकोण है। यहाँ ईश्वर को भय या दंड देने वाली सत्ता के रूप में नहीं, बल्कि सर्वव्यापक चेतना के रूप में देखा गया। इससे व्यक्ति के भीतर आत्मविश्वास, विवेक और नैतिकता का विकास होता है। यही कारण है कि उपनिषद् केवल धार्मिक ग्रंथ नहीं, बल्कि दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक ग्रंथ भी माने जाते हैं⁷।

इस प्रकार उपनिषदिक चिंतन भारतीय ज्ञान परंपरा में आत्मबोध, विवेक और आंतरिक स्वतंत्रता की आधारशिला रखता है, जिसने आगे चलकर वेदांत और अन्य दार्शनिक परंपराओं को गहराई से प्रभावित किया।

5. भारतीय दर्शन : तर्क और विवेक की परंपरा

भारतीय दर्शन ज्ञान परंपरा का वह पक्ष है, जहाँ तर्क, विवेक और विश्लेषण को व्यवस्थित रूप से विकसित किया गया। भारतीय दर्शन को षड्दर्शन के रूप में वर्गीकृत किया गया है –

न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, मीमांसा और वेदांत⁸।

इन दर्शनों की विशेषता यह है कि ये सत्य की खोज को विभिन्न दृष्टिकोणों से करते हैं, न कि किसी एक अंतिम उत्तर को थोपते हैं।

न्याय दर्शन को भारतीय तर्कशास्त्र की आधारशिला माना जाता है। इसके प्रवर्तक गौतम माने जाते हैं। इस दर्शन में ज्ञान को प्रमाणों के माध्यम से स्थापित किया गया है। प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और शब्द इन चार प्रमाणों ने भारतीय बौद्धिक परंपरा को तार्किक अनुशासन प्रदान किया। न्याय दर्शन ने प्रश्न पूछने, शंका करने और विवेचना करने को वैध बनाया, जिससे भारतीय चिंतन वैज्ञानिक दृष्टिकोण की ओर अग्रसर हुआ। वैशेषिक दर्शन, कणाद द्वारा प्रतिपादित, परमाणुवाद की अवधारणा प्रस्तुत करता है। यह दर्शन मानता है कि संपूर्ण सृष्टि सूक्ष्म कणों से बनी है। पदार्थ, गुण, कर्म और गति का विश्लेषण यह दर्शाता है कि भारतीय ज्ञान परंपरा में भौतिक जगत को समझने का प्रयास भी गहराई से किया गया।

डॉ. हारिस उमर, डॉ. मोहम्मद वाज़िद खान, ज्योति पाण्डेय

सांख्य दर्शन, जिसे सबसे प्राचीन दार्शनिक तंत्र माना जाता है, सृष्टि की व्याख्या 25 तत्त्वों के माध्यम से करता है। यह दर्शन पुरुष और प्रकृति के द्वैत को स्वीकार करता है और ईश्वर की अवधारणा के बिना सृष्टि की व्याख्या प्रस्तुत करता है। इससे सांख्य दर्शन की तर्कप्रधान और वैज्ञानिक प्रवृत्ति स्पष्ट होती है।

योग दर्शन, पतंजलि द्वारा व्यवस्थित, सांख्य दर्शन का व्यावहारिक पक्ष है। योग का उद्देश्य चित्तवृत्तियों का निरोध और आत्मानुभूति की प्राप्ति है। अष्टांग योग – यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि – मानव जीवन के नैतिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास का समग्र मार्ग प्रस्तुत करता है।

मीमांसा दर्शन कर्म और कर्तव्य की व्याख्या करता है। जैमिनी द्वारा प्रतिपादित यह दर्शन वेदों के कर्मकांड पक्ष को महत्व देता है और यह स्थापित करता है कि सामाजिक और नैतिक कर्तव्यों का पालन ही जीवन का मुख्य उद्देश्य है। इस दर्शन ने भारतीय समाज में उत्तरदायित्व और अनुशासन की भावना को सुदृढ़ किया।

वेदांत दर्शन उपनिषदिक चिंतन का दार्शनिक विस्तार है। बादरायण के ब्रह्मसूत्र और शंकराचार्य के भाष्य ने वेदांत को एक सुसंगठित दर्शन के रूप में स्थापित किया। वेदांत का केंद्रीय विचार ब्रह्म और आत्मा की एकता है, जो भारतीय दर्शन की सर्वोच्च दार्शनिक उपलब्धियों में से एक मानी जाती है⁹।

दर्शन	संस्थापक	प्रमुख सिद्धांत	ग्रंथ
न्याय	गौतम	16 प्रमाण	न्यायसूत्र
वैशेषिक	कणाद	परमाणुवाद	वैशेषिकसूत्र
सांख्य	कपिल	25 तत्त्व	सांख्यकारिका
योग	पतंजलि	चित्तवृत्तिनिरोधः	योगसूत्र
मीमांसा	जैमिनि	कर्मकांड	मीमांसासूत्र
वेदांत	बादरायण	ब्रह्मसूत्र	ब्रह्मसूत्र

6. विज्ञान और गणित में भारतीय योगदान :

भारतीय ज्ञान परंपरा ने विज्ञान और गणित के क्षेत्र में ऐसे मूलभूत सिद्धांत प्रदान किए, जिनके बिना आधुनिक विश्व की वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति की कल्पना भी संभव नहीं है। भारत में विज्ञान और गणित को केवल सैद्धांतिक विषय नहीं माना गया, बल्कि उन्हें व्यावहारिक जीवन से गहराई से जोड़ा गया। यही कारण है कि भारतीय विज्ञान कृषि, खगोल, वास्तु, चिकित्सा और दैनिक जीवन की आवश्यकताओं से निरंतर जुड़ा रहा।

भारतीय गणित का सबसे महत्वपूर्ण योगदान शून्य और दशमलव स्थानिक मान प्रणाली है। इस प्रणाली के बिना आधुनिक गणित, भौतिकी, कंप्यूटर विज्ञान और डिजिटल तकनीक का विकास असंभव होता। शून्य केवल एक अंक नहीं, बल्कि एक दार्शनिक अवधारणा भी है, जो भारतीय चिंतन में शून्यता और पूर्णता के गहरे अर्थ को दर्शाती है।

शुल्ब सूत्रों में ज्यामिति के सुव्यवस्थित सिद्धांत मिलते हैं। इनमें वर्ग, आयत, वृत्त और समकोण त्रिभुज से संबंधित नियम दिए गए हैं। इन्हीं सूत्रों में वह सिद्धांत मिलता है जिसे आधुनिक काल में पायथागोरस प्रमेय के नाम से जाना जाता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि भारत में ज्यामिति का विकास यूनान से बहुत पहले हो चुका था।

खगोल विज्ञान के क्षेत्र में भी भारतीय विद्वानों का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा। आर्यभट्ट, वराहमिहिर और भास्कराचार्य जैसे गणितज्ञों ने ग्रहों की गति, पृथ्वी के घूर्णन और समय-गणना पर वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया। केरल स्कूल ऑफ मैथमेटिक्स के माधवाचार्य ने अनंत श्रेणियों और त्रिकोणमितीय फलनों के प्रारंभिक सिद्धांत यूरोप से सदियों पहले विकसित किए। इससे यह सिद्ध होता है कि भारतीय ज्ञान परंपरा केवल आध्यात्मिक नहीं, बल्कि अत्यंत तर्कसंगत और वैज्ञानिक थी।

भारतीय विज्ञान का एक विशेष पक्ष यह था कि इसमें प्रकृति के साथ संतुलन और सह-अस्तित्व पर बल दिया गया। विज्ञान को प्रकृति पर विजय का साधन नहीं, बल्कि उसे समझने और उसके साथ सामंजस्य स्थापित करने का माध्यम माना गया।

7. आयुर्वेद: जीवन केंद्रित चिकित्सा परंपरा :

आयुर्वेद भारतीय ज्ञान परंपरा की एक अत्यंत विकसित और समग्र चिकित्सा प्रणाली है। आयुर्वेद शब्द का अर्थ है – “जीवन का विज्ञान”। यह केवल रोगों के उपचार तक सीमित नहीं, बल्कि स्वस्थ, संतुलित और दीर्घ जीवन के सिद्धांतों पर आधारित है।

आयुर्वेद का मूल सिद्धांत है कि स्वास्थ्य केवल शारीरिक स्थिति नहीं, बल्कि शरीर, मन और पर्यावरण के संतुलन से उत्पन्न होता है। आयुर्वेद में रोग को किसी बाहरी शत्रु की तरह नहीं देखा गया, बल्कि शरीर के भीतर उत्पन्न असंतुलन का परिणाम माना गया। इस दृष्टि से आयुर्वेद एक निवारक और समग्र चिकित्सा है।

चरक संहिता आयुर्वेद का प्रमुख ग्रंथ है, जिसमें त्रिदोष सिद्धांत (वात, पित्त, कफ) का विस्तृत विवेचन मिलता है। यह सिद्धांत मानव शरीर की संरचना, कार्यप्रणाली और रोगों की व्याख्या करता है। चरक ने स्पष्ट किया कि रोग का वास्तविक उपचार तभी संभव है, जब उसकी जड़ को समझा जाए, न कि केवल लक्षणों को दबाया जाए।

सुश्रुत संहिता शल्य चिकित्सा का उत्कृष्ट ग्रंथ है। इसमें शल्य क्रियाओं, औजारों, प्लास्टिक सर्जरी और घावों के उपचार का वैज्ञानिक विवरण मिलता है। इसी कारण सुश्रुत को “शल्य चिकित्सा का जनक” कहा जाता है। यह तथ्य यह सिद्ध करता है कि प्राचीन भारत में चिकित्सा विज्ञान अत्यंत उन्नत अवस्था में था।

आयुर्वेद का एक महत्वपूर्ण पक्ष इसका जीवनशैली पर बल है। आहार, निद्रा, दिनचर्या और ऋतुचर्या को स्वास्थ्य का आधार माना गया। आधुनिक जीवनशैली से उत्पन्न रोगों के संदर्भ में आयुर्वेद की यह दृष्टि आज पुनः प्रासंगिक हो गई है।

8. योग और ध्यान: मानसिक संतुलन की परंपरा :

योग भारतीय ज्ञान परंपरा का वह व्यावहारिक पक्ष है, जो सीधे मानव के मानसिक, शारीरिक और आत्मिक विकास से जुड़ा हुआ है।

पतंजलि का योगसूत्र योग दर्शन का आधार ग्रंथ माना जाता है। इसमें योग को परिभाषित किया गया है – “योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः”

अर्थात् योग का उद्देश्य मन की चंचल वृत्तियों को नियंत्रित करना है। यह परिभाषा योग को मानसिक विज्ञान के रूप में स्थापित करती है।

डॉ. हारिस उमर, डॉ. मोहम्मद वाज़िद खान, ज्योति पाण्डेय

पतंजलि द्वारा प्रतिपादित अष्टांग योग-यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि-मानव जीवन के नैतिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास का एक क्रमबद्ध मार्ग प्रस्तुत करता है।

- यम और नियम नैतिक अनुशासन सिखाते हैं
- आसन और प्राणायाम शरीर और श्वास को संतुलित करते हैं
- धारणा, ध्यान और समाधि चेतना के उच्च स्तर तक ले जाते हैं

आज के युग में योग और ध्यान को तनाव, अवसाद और मानसिक असंतुलन के समाधान के रूप में वैश्विक मान्यता मिली है। विश्व स्वास्थ्य संगठन और अनेक वैज्ञानिक अध्ययनों ने योग को मानसिक स्वास्थ्य सुधारने का प्रभावी साधन माना है।

योग भारतीय ज्ञान परंपरा के उस पक्ष को दर्शाता है, जहाँ ज्ञान और अभ्यास, सिद्धांत और जीवन – दोनों का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है।

9. बौद्ध और जैन परंपराएँ :

बौद्ध और जैन परंपराएँ भारतीय ज्ञान परंपरा की उस धारा का प्रतिनिधित्व करती हैं, जिसमें ज्ञान को कर्मकांड, वर्ग और सत्ता से मुक्त कर मानव अनुभव, नैतिक आचरण और करुणा से जोड़ा गया। इन परंपराओं का उद्भव उस सामाजिक संदर्भ में हुआ, जहाँ वैदिक कर्मकांड जटिल और सामान्य जन के लिए कठिन होता जा रहा था। बुद्ध और महावीर ने ज्ञान को सरल, व्यावहारिक और सर्वसुलभ बनाने का प्रयास किया।

बौद्ध परंपरा का केंद्रबिंदु मानव दुःख है। गौतम बुद्ध ने जीवन को दुःखमय स्वीकार करते हुए उसके कारण और समाधान की खोज की। उनके द्वारा प्रतिपादित चार आर्य सत्य, दुःख, दुःख का कारण, दुःख की निवृत्ति और दुःख-निरोध का मार्ग मानव जीवन की यथार्थवादी व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। बुद्ध का मध्यम मार्ग भोग और कठोर तपस्या दोनों अतियों से बचने का संदेश देता है। यह मार्ग नैतिकता, ध्यान और प्रज्ञा के संतुलन पर आधारित है। बुद्ध का यह दृष्टिकोण अत्यंत यथार्थवादी था। उन्होंने जीवन की पीड़ा को न तो दैवी दंड माना और न ही नियति का अटल परिणाम, बल्कि उसे कारण-कार्य संबंध के माध्यम से समझाया। चार आर्य सत्य और अष्टांगिक मार्ग इस बात का प्रमाण हैं कि बौद्ध दर्शन केवल दार्शनिक चिंतन नहीं, बल्कि व्यावहारिक नैतिक जीवन-पद्धति है।

बौद्ध संघों और विहारों ने शिक्षा के लोकतंत्रीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। नालंदा और विक्रमशिला जैसे संस्थान ज्ञान को राज्य या जाति से मुक्त कर वैश्विक बौद्धिक केंद्र बने। इस प्रकार बौद्ध परंपरा ने भारतीय ज्ञान को एशिया के विस्तृत भूभाग तक पहुँचाया।

जैन परंपरा का योगदान मुख्यतः नैतिक शुद्धता और आत्मसंयम के क्षेत्र में रहा। जैन दर्शन की अहिंसा केवल हिंसा-निषेध नहीं, बल्कि जीवन के प्रति गहन सम्मान की भावना है। अनेकांतवाद यह सिखाता है कि सत्य बहुआयामी है और किसी एक दृष्टिकोण से उसे पूर्ण रूप से नहीं समझा जा सकता।

इस प्रकार बौद्ध और जैन परंपराएँ भारतीय ज्ञान परंपरा को नैतिक संवेदनशीलता, सहिष्णुता और मानवीय करुणा से समृद्ध करती हैं।

10. औपनिवेशिक काल और ज्ञान परंपरा का अवमूल्यन :

औपनिवेशिक काल भारतीय ज्ञान परंपरा के लिए एक गंभीर संकट का काल रहा। भारतीय ज्ञान परंपरा का व्यवस्थित और सुनियोजित अवमूल्यन किया गया, जिसका उद्देश्य केवल शासन को सुदृढ़ करना नहीं, बल्कि भारतीय समाज की बौद्धिक, सांस्कृतिक और आत्मिक नींव को कमजोर करना था। अंग्रेजों ने भारतीय ज्ञान को अवैज्ञानिक, पिछड़ा और अनुपयोगी घोषित करते हुए पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली को श्रेष्ठ सिद्ध किया, जिसके परिणामस्वरूप गुरुकुल व्यवस्था, पाठशालाएँ, मदरसे, आयुर्वेद, ज्योतिष, दर्शन और भारतीय भाषाओं को हाशिये पर धकेल दिया गया, हमारी पारंपरिक शिक्षा प्रणालियों (गुरुकुल) को नष्ट कर हमें अपनी ही जड़ों से काट दिया गया। ब्रिटिश शासन के दौरान भारतीय ज्ञान प्रणालियों को अवैज्ञानिक, पिछड़ा और अनुपयोगी घोषित किया गया। इस दृष्टिकोण का सबसे स्पष्ट उदाहरण मैकाले की शिक्षा नीति (1835) है, जिसमें पारंपरिक भारतीय शिक्षा व्यवस्था को हाशिए पर डाल दिया गया।

औपनिवेशिक शिक्षा प्रणाली ने भारतीय समाज में यह धारणा स्थापित की कि ज्ञान केवल पश्चिम से आ सकता है। इसके परिणामस्वरूप गुरुकुल, पाठशालाएँ और पारंपरिक शिक्षण संस्थाएँ धीरे-धीरे समाप्त होने लगीं। इससे भारतीय समाज में आत्मबोध और सांस्कृतिक आत्मविश्वास का क्षरण हुआ।

हालाँकि यह भी सत्य है कि भारतीय ज्ञान परंपरा पूर्णतः समाप्त नहीं हुई। लोकज्ञान, पारिवारिक परंपराएँ और सांस्कृतिक अनुष्ठान इस ज्ञान को जीवित रखते रहे। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान अनेक विचारकों ने भारतीय ज्ञान परंपरा के पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता पर बल दिया।

11. समकालीन संदर्भ में भारतीय ज्ञान परंपरा :

समकालीन विश्व जिन समस्याओं से जूझ रहा है—जैसे पर्यावरण संकट, मानसिक तनाव, नैतिक विघटन और असंतुलित विकास – उनके समाधान में भारतीय ज्ञान परंपरा की प्रासंगिकता पुनः स्पष्ट हो रही है। यह परंपरा विकास को केवल आर्थिक वृद्धि तक सीमित नहीं रखती, बल्कि उसे मानवीय कल्याण और नैतिक संतुलन से जोड़ती है।

योग और आयुर्वेद की वैश्विक स्वीकृति इस बात का प्रमाण है कि भारतीय ज्ञान परंपरा आधुनिक विज्ञान के विरोध में नहीं, बल्कि उसका पूरक बन सकती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारतीय ज्ञान परंपरा को आधुनिक शिक्षा से जोड़ने का एक गंभीर प्रयास है। इसका उद्देश्य केवल प्राचीन ग्रंथों को पढ़ाना नहीं, बल्कि भारतीय ज्ञान के मूल दृष्टिकोण – समग्रता, नैतिकता और विवेक – को आधुनिक संदर्भ में पुनर्स्थापित करना है। संस्कृत, पाली, प्राकृत और तमिल जैसे शास्त्रीय भाषाओं के अध्ययन को आधुनिक संदर्भ से जोड़ा जा रहा है¹⁰।

विज्ञान और स्वास्थ्य के क्षेत्र में, आयुर्वेद, योग और ध्यान आज मानसिक स्वास्थ्य, जीवनशैली रोगों और समग्र उपचार के प्रभावी साधन के रूप में वैश्विक मान्यता प्राप्त कर चुके हैं, जबकि भारतीय गणित और वैज्ञानिक परंपरा आधुनिक तकनीक की बुनियाद बनी हुई है।

पर्यावरण और सतत विकास के संदर्भ में, प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व, सीमित उपभोग, संतोष और पंचमहाभूत की अवधारणा आज के जलवायु परिवर्तन और संसाधन संकट का मूल्य-आधारित समाधान प्रस्तुत करती है। शासन और नेतृत्व में राजधर्म, लोककल्याण, न्याय और नैतिकता की अवधारणा आधुनिक

डॉ. हारिस उमर, डॉ. मोहम्मद वाज़िद खान, ज्योति पाण्डेय

लोकतंत्र को नैतिक आधार प्रदान करती है। वैश्विक स्तर पर, योग, आयुर्वेद और भारतीय दर्शन की स्वीकृति यह सिद्ध करती है कि यह परंपरा सार्वभौमिक और मानवतावादी है। अंततः, डिजिटल युग में ग्रंथों का डिजिटलीकरण, ऑनलाइन शिक्षा और शोध भारतीय ज्ञान परंपरा को परंपरा और आधुनिकता के बीच सेतु बनाकर उसे अधिक प्रासंगिक, सुलभ और प्रभावी बना रहे हैं। इस प्रकार समकालीन संदर्भ में भारतीय ज्ञान परंपरा एक वैकल्पिक विकास मशहबल प्रस्तुत करती है, जो उपभोग-केंद्रित नहीं, बल्कि मानव-केंद्रित है।

12. आलोचनात्मक दृष्टि:

भारतीय ज्ञान परंपरा के अध्ययन में आलोचनात्मक दृष्टि अपनाना अत्यंत आवश्यक है। इसे अंध श्रद्धा या केवल गौरवबोध के दृष्टिकोण से देखना इसकी वास्तविक उपयोगिता को कम कर देता है। आवश्यक है कि भारतीय ज्ञान परंपरा का पुनर्पाठ वैज्ञानिक, तार्किक और आधुनिक संदर्भों के साथ किया जाए। दोनों ही दृष्टियाँ ज्ञान के वास्तविक मूल्य को कम करती हैं। आलोचनात्मक अध्ययन का अर्थ है भारतीय ज्ञान परंपरा को ऐतिहासिक संदर्भ, तर्क और प्रमाण के साथ समझना।

अंधविश्वास, मिथकीय व्याख्याएँ और अतिरंजना भारतीय ज्ञान परंपरा की शक्ति नहीं, बल्कि उसकी कमजोरियाँ हैं। इन्हें अलग रखते हुए ज्ञान को प्रमाण, अनुभव और तर्क के आधार पर समझना चाहिए। विवेकपूर्ण अध्ययन ही भारतीय ज्ञान परंपरा को समकालीन विश्व में प्रासंगिक बनाए रख सकता है।

साथ ही, यह भी ध्यान रखना चाहिए कि भारतीय ज्ञान परंपरा स्वयं आत्म-समीक्षा और संवाद को महत्व देती है। अनेकांतवाद, तर्कशास्त्र और दर्शन की बहुलता इसी आलोचनात्मक चेतना का प्रमाण हैं। इस प्रकार विवेकपूर्ण और आलोचनात्मक दृष्टि अपनाकर ही भारतीय ज्ञान परंपरा को समकालीन और उपयोगी बनाया जा सकता है।

निष्कर्ष

भारतीय ज्ञान परंपरा मानव सभ्यता की उन विरल बौद्धिक परंपराओं में से है, जिसने ज्ञान को केवल सूचना, शक्ति या भौतिक उपलब्धि का साधन नहीं माना, बल्कि मानव चेतना के परिष्कार और जीवन के संतुलन का माध्यम समझा। यह परंपरा आत्मा से लेकर समाज, प्रकृति और ब्रह्मांड तक एक समग्र दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है, जहाँ ज्ञान का अंतिम लक्ष्य केवल जानना नहीं, बल्कि समझना, जीना और कल्याण करना है।

इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय ज्ञान परंपरा किसी एक काल, ग्रंथ या विचारधारा तक सीमित नहीं रही। वैदिक चिंतन से लेकर उपनिषदिक आत्मबोध, षड्दर्शन की तार्किक परंपरा, बौद्ध-जैन नैतिक दर्शन, विज्ञान-गणित, आयुर्वेद और योग तक – हर स्तर पर यह परंपरा संतुलन, विवेक और करुणा को केंद्रीय मूल्य के रूप में स्थापित करती है। यही कारण है कि भारतीय ज्ञान परंपरा में विज्ञान और अध्यात्म, तर्क और अनुभव, व्यक्ति और समाज – इन सभी के बीच टकराव नहीं, बल्कि समन्वय दिखाई देता है।

औपनिवेशिक काल में भारतीय ज्ञान परंपरा का अवमूल्यन अवश्य हुआ, किंतु वह पूरी तरह समाप्त नहीं हुई। लोकज्ञान, सांस्कृतिक स्मृति और सामाजिक व्यवहार के माध्यम से यह परंपरा निरंतर जीवित रही। स्वतंत्रता के बाद और विशेषतः समकालीन वैश्विक संदर्भ में, भारतीय ज्ञान परंपरा की प्रासंगिकता पुनः सामने आ रही है। पर्यावरण संकट, मानसिक तनाव, नैतिक विघटन और असंतुलित विकास जैसे प्रश्नों के समाधान में यह

परंपरा एक मानव-केंद्रित और नैतिक विकल्प प्रस्तुत करती है।

यह भी आवश्यक है कि भारतीय ज्ञान परंपरा का अध्ययन आलोचनात्मक विवेक के साथ किया जाए। इसे न तो अंध-गौरव का विषय बनाया जाना चाहिए और न ही अवैज्ञानिक कहकर खारिज किया जाना चाहिए। तर्क, प्रमाण और आधुनिक संदर्भों के साथ इसका पुनर्पाठ ही इसे समकालीन और उपयोगी बनाए रख सकता है। भारतीय ज्ञान परंपरा की वास्तविक शक्ति उसकी लचीलापन, संवादशीलता और आत्म-सुधार की क्षमता में निहित है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि भारतीय ज्ञान परंपरा केवल अतीत की बौद्धिक धरोहर नहीं, बल्कि भविष्य के लिए एक दिशा-सूचक दृष्टि है। यह परंपरा मानव को उपभोग से ऊपर उठकर उत्तरदायित्व की ओर, प्रतिस्पर्धा से ऊपर उठकर सह-अस्तित्व की ओर और बाह्य सफलता से ऊपर उठकर आंतरिक संतुलन की ओर ले जाती है। इसी अर्थ में भारतीय ज्ञान परंपरा 'स्व' से 'सर्व' तक की यात्रा का मार्ग प्रशस्त करती है।

संदर्भ

1. कपूर, के., एवं सिंह, ए. के. इंडियन नॉलेज सिस्टम्स, डी. के. प्रिंटवर्ल्ड, दिल्ली।
2. जोसेफ, जी. जी. द क्रेस्ट ऑफ द पीकॉक: गणित की गैर-यूरोपीय जड़ें, प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।
3. राधाकृष्णन, एस. द हिन्दू व्यू ऑफ लाइफ (हिन्दू जीवन दृष्टि), जॉर्ज एलन एंड अनविन।
4. मिश्रा, वी. एन. भारतीय संस्कृति और ज्ञान परंपरा।
5. मैकाले, टी. बी. मिनट ऑन इंडियन एजुकेशन (1845)।
6. जैमिसन, एस., एवं ब्रेटन, जे. द ऋग्वेद: एक अनुवाद, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
7. शर्मा, पी. वी. हिस्ट्री ऑफ मेडिसिन इन इंडिया (भारत में चिकित्सा का इतिहास), इंडियन नेशनल साइंस एकेडमी।
8. डॉइच, ई. अद्वैत वेदांत: एक दार्शनिक पुनर्निर्माण, यूनिवर्सिटी ऑफ हवाई प्रेस।
9. चौटर्जी, एस., एवं दत्ता, डी. एन इंट्रोडक्शन टू इंडियन फिलॉसफी (भारतीय दर्शन का परिचय) यूनिवर्सिटी ऑफ कलकत्ता।
10. दासगुप्ता, एस. ए हिस्ट्री ऑफ इंडियन फिलॉसफी (भारतीय दर्शन का इतिहास), कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।
11. बोयर, सी. बी. ए हिस्ट्री ऑफ मैथेमेटिक्स (गणित का इतिहास);, वाइली।
12. भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020।

आईएसएसएन नं. 3048-8664

ग्लोकल दृष्टि GLOCAL DRISHTI

वर्ष 2, अंक: 3-4, सितम्बर-दिसम्बर 2025, पृष्ठ 17-22

सौन्दर्यशास्त्र और प्रसाद का साहित्य

प्रो. शोभा त्रिपाठी, संतोष कुमारी

सारांश

जयशंकर प्रसाद हिंदी साहित्य के छायावादी युग के प्रमुख प्रवर्तकों में हैं। जिनके साहित्य में सौंदर्य-चेतना एक केंद्रीय और जीवन्त तत्व के रूप में अभिव्यक्त होती है। उनकी सौंदर्य दृष्टि केवल बाह्य रूप-वर्णन तक सीमित नहीं है, बल्कि स्थूल से सूक्ष्म तथा भौतिक से आध्यात्मिक की ओर उन्मुख एक गहन अनुभूति है। प्रसाद के लिए सौंदर्य इंद्रिय-सुख का विषय नहीं, बल्कि हृदय की उल्लासपूर्ण चेतना और जीवन की समरसता का प्रतीक है। उनके साहित्य में सौंदर्य तीन प्रमुख आयामों प्रकृति-सौंदर्य, नारी-सौंदर्य और आंतरिक अथवा मानसिक सौंदर्य में प्रकट होता है। प्रकृति उनके यहाँ जड़ नहीं, बल्कि चेतन सत्ता है। जो मानव मन की संवेदनाओं से एकात्म हो जाती है। कामायनी में श्रद्धा के माध्यम से सौंदर्य की रहस्यात्मकता, लज्जा और उदात्तता का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है। नारी-सौंदर्य के संदर्भ में प्रसाद बाहरी आकर्षण से अधिक उसके करुणा, ममता, त्याग और गरिमा के गुणों को महत्व देते हैं। उनके ऐतिहासिक नाटकों में सौंदर्य विलासिता का साधन न होकर प्रेरणा, आदर्श और राष्ट्रप्रेम का स्रोत बनता है। प्रसाद की सौंदर्य चेतना का दार्शनिक आधार शैव दर्शन के आनंदवाद तथा शसमरसता की अवधारणा में निहित है, जहाँ सत्य, शिव और सुंदर की एकात्मता स्थापित होती है। इस प्रकार प्रसाद का साहित्य भारतीय सांस्कृतिक, नैतिक और आध्यात्मिक सौंदर्य-दृष्टि का समन्वित और उदात्त रूप प्रस्तुत करता है।

सौन्दर्यशास्त्र दर्शन शास्त्र की वह शाखा है जो सुन्दरता, कला, प्रकृति और रसात्मक अनुभव के सिद्धान्त और समीक्षा का अध्ययन करती है। यह उस बात की जांच करती है कि हम कला और प्रकृति कैसे संभालते हैं और सौन्दर्य के प्रति हमारा निर्णय कैसे बनता है।

जयशंकर प्रसाद हिंदी साहित्य के उन विरल सर्जकों में हैं जिनकी रचनात्मक दृष्टि में सौंदर्य जीवन की मूल संवेदना के रूप में प्रतिष्ठित है। छायावाद के प्रमुख स्तंभ के रूप में उन्होंने काव्य को आत्मानुभूति: प्रकृति-सामंजस्य और सूक्ष्म भाव जगत की ओर उन्मुख किया, किंतु उनका सौंदर्य-बोध केवल रोमानी भावुकता तक सीमित नहीं है। उनके साहित्य में सौंदर्य एक गहरी सांस्कृतिक, मानवीय और दार्शनिक चेतना के साथ विकसित होता है। प्रसाद की दृष्टि में सौंदर्य बाहरी रूप का आकर्षण मात्र नहीं, बल्कि वह अनुभूति है जो मनुष्य के भीतर संवेदनशीलता, करुणा और समरसता का संचार करती है। वे सौंदर्य को जीवन के संतुलन और विस्तार से जोड़ते हैं। इसी कारण उनके यहाँ प्रकृति का चित्रण जीवंत और आत्मीय है, नारी का रूप गरिमा और मर्यादा से आलोकित है, तथा मानव चेतना का विकास एक सौंदर्यात्मक प्रक्रिया के रूप में चित्रित होता है।

उनकी काव्य प्रति 'कामायनी' में यह सौंदर्य-चेतना अपने दार्शनिक शिखर पर दिखाई देती है, जहाँ भावना, बुद्धि और क्रिया के संतुलन के माध्यम से जीवन्त की पूर्णता की तलाश की गई है। इसी प्रकार उनके ऐतिहासिक नाटकों में भी सौंदर्य विलासिता का उपकरण न होकर आदर्श, त्याग और राष्ट्रीय गौरव से संबद्ध हो जाता है। इस प्रकार प्रसाद का साहित्य सौंदर्य को केवल कलात्मक अनुभव के रूप में नहीं बल्कि जीवन दृष्टि के रूप में प्रतिष्ठित करता है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य सौन्दर्यवाद और प्रसाद के साहित्य में निहित इसी बहुआयामी सौंदर्य-चेतना का विश्लेषण करना है। ताकि यह स्पष्ट किया जा सके कि प्रसाद के लिए सौंदर्य संवेदना, नैतिकता और समरसता का संयुक्त रूप है।

प्रसाद की सौंदर्य-चेतना एकांगी नहीं है, बल्कि बहुस्तरीय और बहुआयामी है। उन्होंने सौंदर्य को केवल रूपात्मक आकर्षण के रूप में नहीं देखा, बल्कि उसे जीवन की संवेदनात्मक और आध्यात्मिक प्रक्रिया से जोड़ा। उनके साहित्य में सौंदर्य प्रकृति, मानव मन और सांस्कृतिक चेतना के विभिन्न रूपों में व्यक्त होता है। कभी वह प्रकृति की लयात्मकता में प्रकट होता है। कभी नारी की गरिमा और कोमलता में, तो कभी मानव-चेतना की आंतरिक ऊर्ध्वगति में। इस प्रकार प्रसाद का सौंदर्य-बोध विविध आयामों से संपन्न है, जिन्हें अलग-अलग स्तरों पर समझना आवश्यक है। जयशंकर प्रसाद के साहित्य में प्रकृति केवल वर्णन का साधन नहीं, बल्कि भाव-जगत की सक्रिय सहचरी के रूप में उपस्थित होती है। उनकी काव्य-दृष्टि में प्रकृति एक चेतनामयी सत्ता है, जो मनुष्य के आंतरिक स्पर्शों के साथ सामंजस्य स्थापित करती है। इसीलिए उनके यहाँ पर्वत, आकाश, मेघ, जल, उषा, संध्या और पुष्प सभी मानवीय संवेदनाओं के प्रतीक बन जाते हैं। प्रकृति का प्रत्येक रूप किसी न किसी मानसिक अवस्था का संकेत देता है।

प्रसाद प्रकृति को बाहरी जगत की वस्तु के रूप में नहीं देखते, वे उसे आत्मानुभूति का विस्तार मानते हैं। जब मानव हृदय उल्लास से भर उठता है, तो प्रकृति भी प्रकाश और रंगों से दीप्त हो उठती है और जब मन में विषाद या मंथन होता है, तो वही प्रकृति गहन, गंभीर और रहस्यपूर्ण प्रतीत होती है। इस प्रकार प्रकृति और मनुष्य के बीच एक अंतर्संबंध स्थापित हो जाता है।

‘हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर, बैठ शिला की शीतल छाँह,

एक पुरुष, भीगे नयनों से देख रहा था प्रलय प्रवाह।’²

‘कामायनी में प्रकृति का स्वरूप विशेष रूप से बहुआयामी है। प्रलय का तांडव हो या आशा का उदय प्रकृति प्रत्येक अवस्था में मनु की मानसिक स्थिति का प्रतिबिंब बनती है। उषा का प्रस्फुटन नवजीवन का संकेत देता है, तरंगों की गति चंचल मन का बिम्ब बनाती है, और शान्त आकाश आत्म-संतुलन की अनुभूति कराता है। यहाँ प्रकृति केवल सजावट नहीं, बल्कि कथा-विकास की सहगामिनी है। प्रसाद के प्रकृति-चित्रण में लय और रंग का अद्भुत संयोजन मिलता है। प्रकाश और छाया का खेल, कोमल और तीव्र बिम्बों का सामंजस्य, तथा गति और स्थिरता का संतुलन ये सभी तत्व उनकी सौंदर्य-दृष्टि को विशिष्ट बनाते हैं। प्रसाद के लिए प्रकृति आनंद और समरसता का स्रोत है। वह मनुष्य को उसके सीमित अस्तित्व से ऊपर उठाकर व्यापक विश्व चेतना से जोड़ती है। प्रकृति के माध्यम से वे यह संकेत देते हैं कि मनुष्य और सृष्टि के मधुर संबंध में जीवन की वास्तविक सुंदरता सामंजस्य में निहित है। इस प्रकार उनका प्रकृति-सौंदर्य भारतीय काव्य-परंपरा की

प्रो. शोभा त्रिपाठी, संतोष कुमारी

संवेदनशीलता और आध्यात्मिक दृष्टि का आधुनिक रूपांतरण है।

जयशंकर प्रसाद के साहित्य में नारी सौंदर्य केवल रूप-सौष्ठव का विषय नहीं है, बल्कि गरिमा, संवेदना और आध्यात्मिक ऊँचाई का प्रतीक है। उनकी दृष्टि में नारी कोई निष्क्रिय या अलंकारिक पात्र नहीं, बल्कि सृजन-शक्ति, प्रेरणा और जीवन-संतुलन की आधारशिला है। प्रसाद नारी के बाहरी रूप का चित्रण अवश्य करते हैं। किन्तु उसका वास्तविक सौंदर्य उसके अंतर्मन, उसकी करुणा, लज्जा, ममता और त्याग में निहित मानते हैं।

**‘उषा सुनहले तीर बरसाती जयलक्ष्मी-सी उदित हुई,
उधर पराजित कालरात्रि भी जल में अन्तर्निहित हुई।’**

‘कामायनी में श्रद्धा का चरित्र नारी-सौंदर्य का सर्वोत्तम उदाहरण है। श्रद्धा का रूप कोमल और आकर्षक है। परंतु उससे अधिक महत्वपूर्ण उसका आत्मिक तेज है। वह प्रेम और विश्वास की मूर्ति है, जो मनु के जीवन में संतुलन और आशा का संचार करती है। प्रसाद के यहाँ नारी का सौंदर्य उसकी आत्मिक शक्ति से प्रकाशित होता है। उसमें लज्जा आवरण है, पर यह दुर्बलता नहीं, वह मर्यादा और गरिमा की प्रतीक है।

प्रसाद के ऐतिहासिक नाटकों में भी नारी सौंदर्य का स्वरूप आदर्शमय और उदात्त है। ‘ध्रुवस्वामिनी’ की नायिका आत्मसम्मान और स्वाधीनता की प्रतीक है। वह केवल प्रेमिका नहीं, बल्कि निर्णय लेने वाली सजग व्यक्तित्व है। स्कंदगुप्त की देवसेना में त्याग का सौंदर्य है—वह निजी भावनाओं का बलिदान कर उच्चतर आदर्श की स्थापना करती है। यहीं सौंदर्य बाहरी रूप से अधिक चरित्र की दृढ़ता और नैतिक ऊँचाई में प्रकट होता है। प्रसाद नारी को जीवन की समरसता का आवश्यक अंग मानते हैं। उनके यहाँ नारी प्रेरणा है, करुणा है। संतुलन है। वह पुरुष के अहं को परिष्कृत करती है और उसे व्यापक मानवता की ओर उन्मुख करती है। इस प्रकार नारी सौंदर्य केवल आकर्षण का विषय नहीं, बल्कि जीवन-दर्शन का अनिवार्य तत्व बन जाता है। अतः कहा जा सकता है कि प्रसाद की नारी-सौंदर्य दृष्टि भारतीय सांस्कृतिक परंपरा से जुड़ी हुई होते हुए भी आधुनिक चेतना से संपन्न है। उन्होंने नारी को सम्मान, स्वाभिमान और आध्यात्मिक गरिमा के साथ चित्रित किया है। जिससे उनका साहित्य ‘सौंदर्य’ की एक उदात्त और समन्वित अवधारणा प्रस्तुत करता है। जयशंकर प्रसाद की सौंदर्य-दृष्टि का सबसे गहन और विशिष्ट पक्ष आंतरिक सौंदर्य की अवधारणा है। उनके लिए वास्तविक सौंदर्य बाह्य रूप या दृश्य आकर्षण में नहीं, बल्कि मनुष्य के अंतर्मन की निर्मलता, संवेदनशीलता और नैतिक ऊँचाई में निहित है। वे मानते हैं कि जहाँ सत्य और कल्याण का संगम होता है, वहीं सौंदर्य की सच्ची अनुभूति संभव है। इस प्रकार उनका सौंदर्य-बोध आध्यात्मिक और नैतिक चेतना से अनुप्राणित है। कामायनी में मनु श्रद्धा और इड़ा के माध्यम से मानव चेतना के विभिन्न आयामों का चित्रण किया गया है। यहाँ सौंदर्य किसी बाह्य दृश्य का नहीं, बल्कि भाव, बुद्धि और क्रिया के संतुलन का परिणाम है। जब मनुष्य अपने भीतर के द्वंद्वों को पार कर समरसता की स्थिति प्राप्त करता है, तभी वह जीवन की सुंदरता को अनुभव कर पाता है। इस दृष्टि से प्रसाद के यहाँ सौंदर्य आत्म-विस्तार की प्रक्रिया है—अहं के संकुचन से निकलकर व्यापक मानवता से जुड़ने की अवस्था।

प्रसाद के नाटकों में भी आंतरिक सौंदर्य चरित्र की दृढ़ता और आदर्श-निष्ठा में व्यक्त होता है। त्याग,

करुणा, साहस और आत्मसम्मान ये सभी गुण उनके पात्रों को आभा प्रदान करते हैं। यहीं रूप से अधिक महत्वपूर्ण है चरित्र का तेज। देवसेना का त्याग, ध्रुवस्वामिनी का आत्मसम्मान और श्रद्धा का समर्पण ये सभी आंतरिक सौंदर्य के उदाहरण हैं। प्रसाद के लिए सौंदर्य वह शक्ति है जो मनुष्य को ऊर्ध्वमुखी बनाती है। जो भावना मनुष्य को संकीर्णता से मुक्त कर व्यापक चेतना की ओर ले जाए, वही सुंदर है। अतः उनका आंतरिक सौंदर्य जीवन की समरसता, संतुलन और आत्मिक शांति में निहित है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि प्रसाद का सौंदर्य-बोध बाह्य जगत से आरंभ होकर अंततः मनुष्य की आत्मा में प्रतिष्ठित हो जाता है। उनका साहित्य हमें यह संदेश देता है कि वास्तविक सुंदरता बाह्य आभा में नहीं, बल्कि अंतःकरण की उज्ज्वलता में निवास करती है।

जयशंकर प्रसाद की सौंदर्य-चेतना का चरम रूप कामायनी में साकार होता है। यह काव्य केवल प्रलय और पुनर्जन्म की कथा नहीं, बल्कि मानव चेतना की सौंदर्यात्मक यात्रा है। यहाँ सौंदर्य किसी बाह्य या शारीरिक आकर्षण तक सीमित नहीं रहता, बल्कि भाव, विचार और आत्मानुभूति के संतुलन में अभिव्यक्त होता है। 'कामायनी' में प्रकृति-सौंदर्य, नारी सौंदर्य और मानसिक-सौंदर्य एक-दूसरे से अंतर्ग्रथित रूप में उपस्थित हैं। प्रलय के बाद का शांत विराट और गंभीर प्राकृतिक परिवेश मानव-मन की रिक्तता और चिंतनशीलता का प्रतीक बनता है। उषा, मेघ, तरंग ये सभी बिंब केवल सज्जा नहीं, बल्कि मनु की आंतरिक अवस्थाओं के द्योतक हैं। प्रकृति के माध्यम से जीवन की लय और नवचेतना का सौंदर्य उद्घाटित होता है।

**‘कौन तुम? संसृति-जलनिधि तीर-तरंगों से फेंकी मणि एक,
कर रहे निर्जन का चुपचाप प्रभा की धारा से अभिषेक?’**

श्रद्धा का चरित्र कामायनी में सौंदर्य की कोमल और उदात्त अभिव्यक्ति है। उसका रूप-वर्णन आकर्षक है, किंतु उससे अधिक प्रभावशाली उसका भाव-सौंदर्य है। श्रद्धा प्रेम, करुणा और विश्वास का प्रतीक है। वह जीवन में संतुलन और आशा का संचार करती है। उसके माध्यम से प्रसाद ने यह स्पष्ट किया कि सौंदर्य केवल शारीरिक अनुपात में नहीं, बल्कि हृदय की निर्मलता में निहित है।

**‘श्रद्धा का सुख साधन निवास जब छोड़ चले आये प्रशांत
पथ-पथ में भटक अटकते वे आये इस ऊजड़ नगर प्रांत’**

इड़ा के माध्यम से बुद्धि और तर्क का आयाम सामने आता है। यहाँ सौंदर्य भाव और विवेक के संतुलन में प्रतिष्ठित होता है। जब मनु श्रद्धा और इड़ा के मध्य समन्वय स्थापित करने में असफल होते हैं, तब जीवन में असंतुलन उत्पन्न होता है। इस संकेत से स्पष्ट है कि प्रसाद के लिए सौंदर्य का वास्तविक स्वरूप समरसता में निहित है।

**‘नीचे जल था ऊपर हिम था, एक तरल था एक सघन,
एक तत्त्व की ही प्रधानता कहो उसे जड़ या चेतन’,**

‘कामायनी’ का समग्र कथानक इस तथ्य की पुष्टि करता है कि सौंदर्य कोई क्षणिक अनुभव नहीं, बल्कि आत्म-विस्तार की प्रक्रिया है। मनुष्य जब अपने भीतर के द्वंद्वों को संतुलित कर व्यापक चेतना से जुड़ता है,

प्रो. शोभा त्रिपाठी, संतोष कुमारी

तभी वह जीवन की पूर्ण सुंदरता का अनुभव करता है। अतः 'कामायनी' में सौंदर्य-निरूपण बहुआयामी है-वह प्रकृति की रमणीयता में है, नारी की गरिमा में है, और सबसे बढ़कर मनुष्य की आत्मिक चेतना में है। यही व्यापकता प्रसाद की सौंदर्य-दृष्टि को विशिष्ट और दार्शनिक गहराई से युक्त बनाती है।

जयशंकर प्रसाद के ऐतिहासिक नाटकों में सौंदर्य का स्वरूप विशिष्ट और उदात्त है। यहाँ सौंदर्य केवल बाह्य रूप-सौष्ठव या दृश्य-विलास का साधन नहीं, बल्कि चरित्र की ऊँचाई, आदर्श-निष्ठा और आत्मसंयम से जुड़ा हुआ है। प्रसाद ने अपने नाटकों में सौंदर्य को गरिमा के साथ जोड़ा है, जिससे वह नैतिक और सांस्कृतिक अर्थ ग्रहण कर लेता है। स्कंदगुप्त में राष्ट्र-निष्ठा और त्याग का सौंदर्य प्रमुख है। स्कंदगुप्त का व्यक्तित्व बाहरी आभा से अधिक उसके कर्तव्यबोध और आत्मबल में सुंदर प्रतीत होता है। वह निजी सुखों का परित्याग कर राष्ट्र की रक्षा को सर्वोपरि मानता है। यहाँ सौंदर्य वीरता और आत्मसंयम में प्रतिष्ठित है। देवसेना का चरित्र भी त्याग और आत्मगौरव का उदाहरण है, उसका सौंदर्य उसके धैर्य और नैतिक दृढ़ता में निहित है।

मधुप कब एक कली का है!

**पाया जिसमें प्रेमरस, सौरभ और सुहाग,
बेसुध हो एस कली से, मिलता भर अनुराग,
बिहारी कुंजगली का है!,**

चंद्रगुप्त में चाणक्य की बुद्धि और दूरदर्शिता को भी एक प्रकार का सौंदर्य प्राप्त है। यहाँ सौंदर्य केवल कोमलता का पर्याय नहीं, बल्कि नीति, साहस और नेतृत्व की क्षमता में भी अभिव्यक्त होता है। राष्ट्रनिर्माण की भावना और आदर्शों के प्रति प्रतिबद्धता पात्रों को गरिमामय बनाती है।

'ध्रुवस्वामिनी' में नारी सौंदर्य गरिमा और आत्मसम्मान के रूप में उभरता है। 'ध्रुवस्वामिनी' परिस्थितियों के समक्ष झुकती नहीं, बल्कि अपने स्वाभिमान की रक्षा करती है। उसका सौंदर्य उसकी स्वतंत्र चेतना और आत्मनिर्णय की क्षमता में निहित है। यहाँ प्रसाद ने स्पष्ट किया कि वास्तविक सौंदर्य आत्मसम्मान और आंतरिक दृढ़ता में बसता है। प्रसाद के नाटकों में सौंदर्य और गरिमा परस्पर पूरक तत्व हैं। बाह्य रूप की अपेक्षा चरित्र की ऊँचाई अधिक महत्वपूर्ण है। त्याग, कर्तव्य, आत्मबल और राष्ट्रप्रेम ये सभी गुण उनके पात्रों को आभामय बनाते हैं। इस प्रकार उनके नाटकों में सौंदर्य नैतिक आदर्श और सांस्कृतिक गौरव से संयुक्त होकर एक उदात्त स्वरूप ग्रहण करता है।

जयशंकर प्रसाद की सौंदर्य-चेतना केवल भावुकता या रूप-आस्वाद तक सीमित नहीं है। उसका गहरा आधार भारतीय दार्शनिक परंपरा में निहित है। विशेषतः शैव दर्शन के आनंदवाद और समरसता की अवधारणा ने उनके चिंतन को महत्वपूर्ण दिशा प्रदान की है। प्रसाद के लिए सौंदर्य वह अनुभूति है, जो मनुष्य को सीमित अहं से ऊपर उठाकर व्यापक विश्व-चेतना से जोड़ती है। आनंदवाद के अनुसार सृष्टि का मूल तत्व आनंद है। जब मनुष्य अपने भीतर संतुलन और आत्म-एकत्व का अनुभव करता है, तब वह वास्तविक आनंद को प्राप्त करता है। प्रसाद की रचनाओं में यह आनंद बाह्य भोग का परिणाम नहीं, बल्कि अंतःकरण की निर्मलता और चेतना की विस्तृत अवस्था का द्योतक है। 'कामायनी' में मनु की यात्रा इसी आत्म-अन्वेषण और

संतुलन की प्रक्रिया को व्यक्त करती है। जब भाव और बुद्धि के बीच असंतुलन होता है, तब जीवन में विघटन आता है और जब दोनों में सामंजस्य स्थापित होता है, तब आनंद और सौंदर्य की अनुभूति संभव होती है।

प्रसाद की समरसता की धारणा जीवन के विविध तत्वों के संतुलन पर आधारित है। उनके साहित्य में व्यक्ति और समाज, प्रकृति और मानव, भावना और तर्क इन सबके बीच सामंजस्य की आकांक्षा दिखाई देती है। यही समरसता उनके सौंदर्य-बोध का मूल है। सौंदर्य वहाँ है जहाँ विरोध नहीं, बल्कि संतुलित सह-अस्तित्व है। उनकी नाट्य-कृतियों में भी यह दार्शनिक दृष्टि स्पष्ट होती है। पात्रों के संघर्ष अंततः किसी व्यापक संतुलन की ओर संकेत करते हैं। त्याग और कर्तव्य, प्रेम और मर्यादा, शक्ति और करुणा, इन सबके समन्वय में ही जीवन की पूर्णता निहित है। अतः प्रसाद की सौंदर्य-चेतना का दार्शनिक आधार आनंद और समरसता की अवधारणाओं में प्रतिष्ठित है। उनके लिए सौंदर्य कोई क्षणिक आकर्षण नहीं, बल्कि जीवन की संतुलित, व्यापक और आत्मिक अनुभूति है। यही दृष्टि उनके साहित्य को गहन दार्शनिक ऊँचाई प्रदान करती है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि जयशंकर प्रसाद के साहित्य में सौंदर्य-चेतना बहुआयामी, गहन और दार्शनिक आधार से संपन्न है। उनका सौंदर्य-बोध केवल बाह्य रूप-सौष्ठव तक सीमित नहीं, बल्कि प्रकृति, नारी, चरित्र और मानव चेतना के आंतरिक संतुलन में प्रतिष्ठित है। उन्होंने सौंदर्य को जीवन की समरसता, नैतिक ऊँचाई और आत्मिक विस्तार से जोड़ा है। 'कामायनी' में यह सौंदर्य भाव और बुद्धि के संतुलन के रूप में विकसित होता है, जहाँ श्रद्धा, इड़ा और मनु के माध्यम से मानव-चेतना की यात्रा चित्रित हुई है। उनके ऐतिहासिक नाटकों में सौंदर्य गरिमा, त्याग और राष्ट्रनिष्ठा के साथ जुड़कर एक उदात्त स्वरूप ग्रहण करता है। इस प्रकार प्रसाद ने सौंदर्य को विलासिता का साधन न बनाकर आदर्श और जीवन-मूल्यों की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। उनकी सौंदर्य-दृष्टि का मूलाधार आनंद और समरसता की दार्शनिक अवधारणाएँ हैं। जब जीवन के विविध तत्वों में संतुलन स्थापित होता है, तभी सौंदर्य की पूर्ण अनुभूति संभव होती है। इस दृष्टि से प्रसाद का साहित्य भारतीय सांस्कृतिक परंपरा और आधुनिक संवेदनशीलता का समन्वित रूप प्रस्तुत करता है। अतः कहा जा सकता है कि जयशंकर प्रसाद ने सौंदर्य को केवल काव्य का विषय न बनाकर जीवन-दर्शन का रूप प्रदान किया। उनके साहित्य में सौंदर्य संवेदना, नैतिकता और आध्यात्मिक चेतना का समन्वित स्वरूप है, जो आज भी मानवीय जीवन को दिशा देने में समर्थ है।

संदर्भ

1. https://kavitakosh-org/kk/vk;lw/_/जयशंकर_प्रसाद_/_पृष्ठ;२
2. कामायनी, जयशंकर प्रसाद, साहित्य सरोवर आगरा, पृष्ठ-19
3. कामायनी, जयशंकर प्रसाद, साहित्य सरोवर आगरा, पृष्ठ-27
4. कामायनी, जयशंकर प्रसाद, साहित्य सरोवर आगरा, पृष्ठ-36
5. कामायनी, जयशंकर प्रसाद, साहित्य सरोवर आगरा, पृष्ठ-83
6. कामायनी, जयशंकर प्रसाद, साहित्य सरोवर आगरा, पृष्ठ-19
7. चन्द्रगुप्त, जयशंकर प्रसाद, मैपल प्रैस प्रा0 लि0 नोयडा, पृष्ठ-130

भारतीय ज्ञान परंपरा में आयुर्वेद – सुश्री अंजू बाला

सारांश

आयुर्वेद भारत की प्राचीन और वैज्ञानिक चिकित्सा पद्धति है, जिसका मुख्य उद्देश्य केवल रोगों का उपचार नहीं, बल्कि स्वस्थ जीवन की स्थापना करना है। आयुर्वेद के अनुसार स्वास्थ्य वह अवस्था है जिसमें शरीर, मन, इंद्रियाँ और आत्मा सभी संतुलन में हो। यह जीवन को दीर्घ, सुखी और उपयोगी बनाने की कला है। आयुर्वेद त्रिदोष वात, पित और कफ के संतुलन को स्वास्थ्य का आधार मानता है। जब ये दोष संतुलित रहते हैं, तब शरीर स्वस्थ रहता है और असंतुलन होने पर रोग उत्पन्न होते हैं। इसके साथ ही सप्तधातु, मल, अग्नि और मन की संतुलित स्थिति को भी स्वस्थ जीवन के लिए आवश्यक बताया गया है।

आयुर्वेद में दिनचर्या, ऋतुचर्या, आहार-विहार, योग, प्राणायाम और औषधीय वनस्पतियों पर विशेष बल दिया गया है। यह पद्धति रोग की रोकथाम, प्राकृतिक उपचार और जीवनशैली सुधार पर आधारित है। आज के तनावपूर्ण और असंतुलित जीवन में आयुर्वेद स्वास्थ्य संरक्षण का एक प्रभावी, सुरक्षित और समग्र समाधान प्रस्तुत करता है।

इस प्रकार आयुर्वेद न केवल चिकित्सा विज्ञान है, बल्कि स्वस्थ, संतुलित और नैतिक जीवन जीने की एक संपूर्ण जीवन-दृष्टि है। आयुर्वेद भारत की प्राचीन और वैज्ञानिक चिकित्सा पद्धति है, जिसका मुख्य उद्देश्य केवल रोगों का उपचार नहीं, बल्कि स्वस्थ जीवन की स्थापना करना है। आयुर्वेद के अनुसार स्वास्थ्य वह अवस्था है जिसमें शरीर, मन, इंद्रियों और आत्मा सभी संतुलन में हों। यह जीवन को दीर्घ, सुखी और उपयोगी बनाने की कला है।

आयुर्वेद त्रिदोष वात, पित्त और कफ के संतुलन को स्वास्थ्य का आधार मानता है। जब ये दोष संतुलित रहते हैं, तब शरीर स्वस्थ रहता है और असंतुलन होने पर रोग उत्पन्न होते हैं। इसके साथ ही सप्तधातु, मल, अग्नि और मन की संतुलित स्थिति को भी स्वस्थ जीवन के लिए आवश्यक बताया गया है।

आयुर्वेद में दिनचर्या, ऋतुचर्या, आहार-विहार, योग, प्राणायाम और औषधीय वनस्पतियों पर विशेष बल दिया गया है। यह पद्धति रोग की रोकथाम, प्राकृतिक उपचार और जीवनशैली सुधार पर आधारित है। आज के तनावपूर्ण और असंतुलित जीवन में आयुर्वेद स्वास्थ्य संरक्षण का एक प्रभावी, सुरक्षित और समग्र समाधान प्रस्तुत करता है।

इस प्रकार आयुर्वेद न केवल चिकित्सा विज्ञान है, बल्कि स्वस्थ, संतुलित और नैतिक जीवन जीने की एक संपूर्ण जीवन-दृष्टि है। वैद भारतीय ज्ञान-परंपरा की वह अमूल्य निधि है, जिसने मानव जीवन को केवल रोगोपचार तक सीमित न रखकर, उसे संपूर्णता में समझने का प्रयास किया। आयुर्वेद का उद्देश्य मनुष्य को दीर्घायु, निरोग और संतुलित जीवन प्रदान करना है। भारतीय ज्ञान परंपरा में आयुर्वेद की भूमिका अत्यंत

व्यापक, गहन और जीवनोपयोगी रही है। आयुर्वेद को 'आयुः वेद' अर्थात् जीवन का विज्ञान कहा गया है, जिसका उद्देश्य केवल रोगों का उपचार करना नहीं, बल्कि स्वस्थ, संतुलित और नैतिक जीवन की स्थापना करना है। अथर्ववेद से विकसित आयुर्वेद ने मानव जीवन को शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक स्तर पर समझने की परंपरा विकसित की। चरक संहिता, सुश्रुत संहिता और अष्टांग हृदय जैसे ग्रंथों में चिकित्सा, शल्य-चिकित्सा, औषधि-विज्ञान, शरीर-रचना, रोग-निदान और उपचार के वैज्ञानिक सिद्धांत प्रस्तुत किए गए हैं। आचार्य चरक और आचार्य सुश्रुत आयुर्वेद के दो प्रमुख आधार स्तंभ हैं। चरक ने कायचिकित्सा और सिद्धांतात्मक पक्ष को सुदृढ़ किया, जबकि सुश्रुत ने शल्य चिकित्सा तथा शरीर रचना को वैज्ञानिक आधार प्रदान किया। इन दोनों के ग्रंथों में वर्णित आधारभूत अवधारणाएँ आज भी आयुर्वेद की आत्मा मानी जाती हैं।

आयुर्वेद का त्रिदोष सिद्धांत वात, पित्त और कफ मानव शरीर की क्रियाओं को समझने का मूल आधार है, जिसके माध्यम से रोगों की उत्पत्ति, प्रकृति और उपचार का निर्धारण किया जाता है। दिनचर्या, ऋतुचर्या, सवृत और आचार-रसायन जैसी अवधारणाएँ व्यक्ति को अनुशासित, संयमित और प्रकृति-संलग्न जीवन जीने की प्रेरणा देती हैं। आयुर्वेद आहार को औषधि के रूप में मानता है और प्राकृतिक जड़ी-बूटियों, वनस्पतियों तथा खनिजों के संतुलित उपयोग पर बल देता है।

इस प्रकार आयुर्वेद भारतीय ज्ञान परंपरा में केवल चिकित्सा प्रकृति नहीं, बल्कि जीवन-दर्शन, नैतिकता और पर्यावरण-संरक्षण से जुड़ा समय विज्ञान है, जो आधुनिक युग में भी अपनी प्रासंगिकता बनाए हुए है और वैश्विक स्तर पर भारत की बौद्धिक एवं सांस्कृतिक धरोहर का प्रतिनिधित्व करता है।

आयु की अवधारणा

आचार्य चरक के अनुसार आयु केवल शरीर का अस्तित्व नहीं, बल्कि शरीर, इन्द्रिय, मन और आत्मा का समन्वित रूप है। इनमें से किसी एक की भी अस्वस्थता संपूर्ण आयु को प्रभावित करती है। सुश्रुताचार्य भी इसी विचार को स्वीकार करते हैं और कहते हैं कि जीवन तभी सार्थक है जब शारीरिक, मानसिक और नैतिक संतुलन बना रहे। इस प्रकार आयुर्वेद मानव जीवन को बहुआयामी दृष्टि से देखता है। आयुर्वेद के अनुसार आयु की अवधारणा अत्यंत व्यापक, दार्शनिक और वैज्ञानिक हैं। आयुर्वेद में आयु को केवल वर्षों की गणना तक सीमित नहीं किया गया है, बल्कि इसे शरीर, इन्द्रियों, मन और आत्मा के समन्वित, संतुलित और सार्थक अस्तित्व के रूप में परिभाषित किया गया है। चरक संहिता के अनुसार आयु वह स्थिति है जिसमें शरीर की धातुएँ, दोष और मल संतुलन में रहते हैं तथा मन प्रसन्न और इन्द्रियों सक्षम होती हैं। इस दृष्टि से दीर्घायु वही मानी जाती है जो रोगमुक्त, सक्रिय और मानसिक रूप से संतुलित हो। आयुर्वेद मानव जीवन को विभिन्न अवस्थाओं-बाल्य, मध्य और वृद्धावस्था में विभाजित करता है और प्रत्येक अवस्था के अनुरूप आहार, विहार और आचार के नियम निर्धारित करता है। आयुर्वेद के अनुसार आयु की गुणवत्ता व्यक्ति के कर्म, आहार-विहार, दिनचर्या, ऋतुचर्या और मानसिक प्रवृत्तियों पर निर्भर करती है। त्रिदोष वात, पित्त और कफ का संतुलन आयु को दीर्घ और स्वस्थ बनाने में निर्णायक भूमिका निभाता है, जबकि इनका असंतुलन रोग और

सुश्री अंजू बाला

अल्पायु का कारण बनता है। आयुर्वेद श्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणं, आतुरस्य विकार प्रशमन के सिद्धांत के माध्यम से आयु की रक्षा और संवर्धन पर बल देता है। आचार-रसायन, सवृत्त, संयम, सत्य, करुणा और मानसिक शुद्धता को दीर्घायु का आधार माना गया है। इस प्रकार आयुर्वेद में आयु केवल जीवन की अवधि नहीं, बल्कि जीवन की गुणवत्ता, उद्देश्यपूर्णता और संतुलन का प्रतीक है, जो मानव को पूर्ण और समन्वित जीवन जीने की प्रेरणा देता है।

पंचमहाभूत सिद्धांत

आयुर्वेद की दार्शनिक नींव पंचमहाभूत सिद्धांत पर आधारित है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश- ये पाँच तत्व सृष्टि के मूल घटक हैं। मानव शरीर, आहार, औषधि और पर्यावरण सभी इन पंचमहाभूतों से बने हैं। चरकाचार्य ने कहा है कि रोग और स्वास्थ्य दोनों ही पंचमहाभूतों के संतुलन या असंतुलन पर निर्भर करते हैं। सुश्रुताचार्य ने इस सिद्धांत को शरीर रचना से जोड़ते हुए अंगों और ऊतकों की संरचना को पंचमहाभूतात्मक बताया।

आयुर्वेद तथा भारतीय ज्ञान परंपरा में पंच महाभूत सिद्धांत को सृष्टि, शरीर और जीवन की मूल संरचना का आधार माना गया है। इसके अनुसार समस्त ब्रह्मांड और मानव शरीर पाँच मूल तत्वों-पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश से निर्मित हैं। ये पञ्चों महाभूत अलग-अलग गुणों, कार्यों और प्रभावों के माध्यम से शरीर और प्रकृति को संचालित करते हैं। प्रत्येक महाभूत का विवरण इस प्रकार है-

1. पृथ्वी महाभूत (Earth Element)

पृथ्वी महाभूत स्थिरता, दृढ़ता, भार और संरचना का प्रतीक है। यह शरीर को आकार, मजबूती और आधार प्रदान करता है। शरीर की मांसपेशियों, हड्डियों, त्वचा, नाखून, दाँत आदि पृथ्वी तत्व से बने माने जाते हैं। इसके गुण हैं-गुरु द्रव्यभारी, स्थिर, कठोर और ठोस। पृथ्वी महाभूत के संतुलन से शरीर में सहनशक्ति, बल और स्थायित्व बना रहता है, जबकि इसके असंतुलन से आलस्य, मोटापा, जड़ता और भारीपन जैसे विकार उत्पन्न हो सकते हैं।

2. जल महाभूत (Water Element)

जल महाभूत तरलता, शीतलता, स्निग्धता और पोषण का प्रतिनिधित्व करता है। यह शरीर में रक्त, रस, लसीका, पसीना, लार तथा अन्य द्रवों के रूप में विद्यमान रहता है। इसके गुण हैं- शीतल, तरल, स्निग्ध और कोमल। जल तत्व शरीर को पोषण, स्नेहन और जीवन-ऊर्जा प्रदान करता है। इसके संतुलन से शरीर में कोमलता और ताजगी बनी रहती है, जबकि असंतुलन से सूजन, कफ विकार, अत्यधिक लार या जल संचय जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

3. अग्नि महाभूत (Fire Element)

अग्नि महाभूत ऊर्जा, ताप, प्रकाश और रूपांतरण का तत्व है। यह शरीर में पाचन, चयापचय, भूख, बुद्धि और चित्त से संबंधित कार्यों को नियंत्रित करता है। इसके गुण हैं- उष्ण, तीक्ष्ण, रूक्ष और प्रकाशक। जठराग्नि, धात्वग्नि और भूताग्नि के रूप में अग्नि शरीर की क्रियाशीलता को बनाए रखती है। अग्नि का

संतुलन अच्छे पाचन और तेजस्वी बुद्धि का कारण बनता है, जबकि असंतुलन से अपच, जलन, क्रोध और ज्वर जैसे विकार उत्पन्न होते हैं।

4. वायु महाभूत (Air Element)

वायु महाभूत गति, संचार और क्रियाशीलता का प्रतीक है। यह शरीर में श्वसन, रक्त संचार, स्नायु-गति, उत्सर्जन और मानसिक चंचलता को नियंत्रित करता है। इसके गुण हैं-लघु, शुष्क, चल और सूक्ष्म। वायु के कारण ही शरीर में सभी प्रकार की गतियों संभव होती हैं। इसके संतुलन से शरीर में स्फूर्ति और सक्रियता रहती है, जबकि असंतुलन से कंपन, दर्द, अनिद्रा, भय और स्नायु विकार उत्पन्न हो सकते हैं।

5. आकाश महाभूत (Space Element)

आकाश महाभूत शून्यता, विस्तार और अवकाश का तत्व है। यह शरीर में सभी प्रकार की नलिकाओं, छिद्रों और रिक्त स्थानों जैसे मुख, नासिका, हृदय, फेफड़े और कोशिकाओं के बीच का स्थान का निर्माण करता है। इसके गुण हैं-सूक्ष्म, हल्का और अवरोधहीन। आकाश महाभूत संचार और ध्वनि का माध्यम है। इसके संतुलन से शरीर में सामंजस्य और खुलापन रहता है, जबकि असंतुलन से शून्यता, भय, एकाकीपन और मानसिक अस्थिरता उत्पन्न हो सकती है।

इस प्रकार पंच महाभूत सिद्धांत आयुर्वेद का मूल आधार है, जिसके माध्यम से शरीर की संरचना, कार्य, रोग और उपचार को समझा जाता है। इन पाँचों महाभूतों का संतुलन ही स्वस्थ जीवन का आधार है और इनका असंतुलन रोगों का कारण। आयुर्वेद इसी सिद्धांत के आधार पर आहार, औषधि और जीवन-शैली का निर्धारण करता है।

त्रिदोष सिद्धांत

त्रिदोष सिद्धांत आयुर्वेद की सबसे केंद्रीय अवधारणा है। वात, पित्त और कफ ये तीन दोष पंचमहाभूतों के संयोग से उत्पन्न होते हैं और शरीर की समस्त क्रियाओं का संचालन करते हैं। आयुर्वेद के अनुसार मानव शरीर केवल मांस-हड्डियों का ढांचा नहीं, बल्कि पंचमहाभूतों (आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी) से निर्मित एक जीवंत तंत्र है। इन्हीं पंचमहाभूतों की क्रियात्मक अभिव्यक्ति को त्रिदोष वात, पित्त और कफ कहा गया है। ये तीनों दोष शरीर की समस्त शारीरिक, मानसिक और जैविक क्रियाओं का संचालन करते हैं।

1. वात दोष :

वात दोष वायु और आकाश महाभूत से उत्पन्न होकर गति, संचार, श्वसन, रक्त प्रवाह और स्नायु क्रियाओं को नियंत्रित करता है।

महाभूत: आकाश वायु

मुख्य गुण: शुष्क, शीतल, हल्का, सूक्ष्म, चल, रूक्ष प्रधान कार्थरू गति द्धडवअमउमदजत्र

वात के कार्य:

‘वसन’ सांस लेना-छोड़ना, रक्त परिसंचरण, भोजन का पाचन-अवशोषण, स्नायु तंत्र की क्रियाएँ, बोलना,,

सुश्री अंजू बाला

वात को शरीर का संचालक दोष कहा जाता है, क्योंकि पित्त और कफ भी वात की सहायता से ही कार्य करते हैं।

चलना, सोचना

वात का स्थान:

बड़ी आंत, कमर और निचला शरीर, हड्डियाँ, कान, त्वचा

वात विकृति के लक्षण:

शरीर में दर्द, ऐंठन, कब्ज, गैस, चिंता, भय, अनिद्रा, जोड़ों में चरमराहट, त्वचा का शुष्क होना

2. पित्त दोष (Pitta Dosha) पित्त दोष अग्नि और जल महाभूत से बना है तथा पाचन, ताप, दृष्टि और बुद्धि से संबंधित है।

महाभूत: अग्नि जल

मुख्य गुण: उष्ण, तीक्ष्ण, द्रव, लघु, अम्ल प्रधान कार्य: परिवर्तन (Transformation)

पित्त के कार्य:

भोजन का पाचन, तापमान नियंत्रण, रक्त निर्माण, बुद्धि, विवेक और साहस, दृष्टि और तेज पित्त को शरीर का रासायनिक और जैविक नियंत्रक कहा जाता है।

पित्त का स्थान:

छोटी आंत, यकृत (लीवर), प्लीहा, आंखें, रक्त

पित्त विकृति के लक्षण:

अत्यधिक पसीना, जलन, अम्लता, क्रोध, चिड़चिड़ापन, त्वचा रोग, अल्सर, दस्त

3. कफ दोष: कफ दोष पृथ्वी और जल महाभूत से उत्पन्न होकर स्थिरता, स्निग्धता, बल और सहनशक्ति प्रदान करता है।

महाभूत: जल पृथ्वी

मुख्य गुण: गुरु, शीतल, स्निग्ध, स्थिर, मन्द

प्रधान कार्य: संरचना द्वैजतनबजनतमऋ

कफ के कार्य:

शरीर को स्थिरता देना, जोड़ों में स्नेहन, बल और, सहनशक्ति, प्रतिरक्षा शक्ति (Immunity), ऊतकों का पोषण कफ को शरीर का निर्माण और संरक्षण दोष कहा जाता है।

कफ का स्थान: छाती, फेफड़े, आमाशय, सिर, जोड़

कफ विकृति के लक्षण:

वजन बढ़ना, आलस्य, कफ जमना, खांसी, सुस्ती, श्वास कष्ट

त्रिदोष का संतुलन और स्वास्थ्य

आयुर्वेद के अनुसार-

समदोष: समाग्निश्च समधातु मलक्रिया:।

अर्थात् जिस व्यक्ति के दोष, अग्नि, धातु और मल संतुलित हों, वही स्वस्थ है। प्रत्येक व्यक्ति में तीनों दोष होते हैं, परंतु एक या दो दोष प्रधान होते हैं। यही दोष-प्रधानता व्यक्ति की प्रकृति (वातज, पित्तज, कफज या विद्वदोषज) निर्धारित करती है। रोग तब उत्पन्न होता है जब इन दोषों में असंतुलन हो जाता है। त्रिदोष सिद्धांत आयुर्वेद की आत्मा है। यह केवल रोग-निदान ही नहीं, बल्कि जीवन-शैली, आहार, व्यवहार और मानसिक संतुलन का भी मार्गदर्शन करता है। दोषों के संतुलन द्वारा व्यक्ति न केवल रोगमुक्त रहता है, बल्कि दीर्घायु, तेजस्वी और संतुलित जीवन जी सकता है। चरकाचार्य ने दोषों को जीवनी शक्ति के रूप में देखा, जबकि सुश्रुताचार्य ने इनके विकारों को शल्य एवं अशल्य चिकित्सा से जोड़कर समझाया। दोषों की सम अवस्था स्वास्थ्य और विषम अवस्था रोग का कारण है।

1. त्रिदोष के अनुसार आहार (Diet as per Tridosha)

आयुर्वेद मानता है कि जैसा भोजन, वैसा शरीर और मन। गलत आहार से दोष बढ़ते हैं और सही आहार से दोष संतुलित रहते हैं।

(क) वात दोष के लिए आहार वात बढ़ाने वाले गुण: शुष्क, ठंडा, हल्का इसलिए वात को गर्म, स्निग्ध और पौष्टिक भोजन चाहिए। गर्म दूध, घी, गेहूं, चावल, दालें (मूंग, मसूर), पकी हुई सब्जियाँ, खजूर, किशमिश, हल्के मसाले दसैंठ, अजवाइन, लाभ: गैस, कब्ज, चिंता और अनिद्रा में राहत

उपयुक्त आहार:

त्याज्य आहार:

बहुत ठंडा भोजन, कच्ची सब्जियों, फास्ट फूड, अधिक चाय-कॉफी, सूखा भोजन

(ख) पित्त दोष के लिए आहार

पित्त बढ़ाने वाले गुण: गर्म, तीखा, अम्लीय इसलिए पित्त को शीतल और मधुर भोजन चाहिए। उपयुक्त आहार: ठंडा दूध, मट्ठा, चावल, जौ, खीरा, लौकी, कदू, मीठे फल (केला, सेब), नारियल पानी, धनिया, लाभ: जलन, क्रोध, अम्लता और त्वचा रोगों से बचाव

त्याज्य आहार:

मिर्च-मसाले, तला हुआ भोजन, खट्टे फल, शराब, अधिक नमक

(ग) कफ दोष के लिए आहार

कफ बढ़ाने वाले गुण: भारी, ठंडा, चिकना इसलिए कफ को हल्का, गर्म और रूक्ष भोजन चाहिए। उपयुक्त आहार: जौ, बाजरा, अदरक, काली मिर्च, हल्की सब्जियों, शहद, गर्म पानी लाभ: मोटापा, आलस्य, कफ और सर्दी-खांसी में नियंत्रण

त्याज्य आहार:

अधिक दूध-दही, मिठाइयाँ, तला-भुना, आलू, चावल (अधिक मात्रा में), ठंडे पेय

2. त्रिदोष के अनुसार दिनचर्या (Daily Routine)

वात प्रकृति:

सुश्री अंजू बाला

नियमित समय पर सोना-जागना, तेल मालिश, योग, ध्यान, अधिक यात्रा से बचें

पित्त प्रकृति:

समय पर भोजन, धूप और क्रोध से दूरी, शीतल वातावरण, ध्यान और प्राणायाम

कफ प्रकृति:

जल्दी उठना, नियमित व्यायाम, दिन में न सोना, सक्रिय जीवनशैली

3. आधुनिक जीवन में त्रिदोष की उपयोगिता

आज की जीवनशैली-

तनाव, मोबाइल/स्क्रीन का अधिक उपयोग, अनियमित भोजन, नींद की कमी, आदि ये सभी त्रिदोष असंतुलन के मुख्य कारण हैं। उदाहरण:

तनाव नींद की कमी = वात विकृति

फास्ट फूड क्रोध पित्त विकृति

व्यायाम की कमी अधिक भोजन कफ विकृति

यदि व्यक्ति अपनी प्रकृति पहचानकर आहार-विहार अपनाए, तो-दवाइयों पर निर्भरता कम होती है रोगों से बचाव होता है।

मानसिक शांति मिलती है

जीवन संतुलित बनता है

वस्तुतः त्रिदोष केवल चिकित्सा सिद्धांत नहीं, बल्कि जीवन जीने की कला है।

जब वात, पित्त और कफ संतुलित रहते हैं, तब शरीर, मन और आत्मा तीनों स्वस्थ रहते हैं।

आयुर्वेद में सप्तधातु सिद्धांत (Saptadhatu Siddhant)

आयुर्वेद के अनुसार मानव शरीर की संरचना, पोषण और शक्ति का आधार सप्तधातु सिद्धांत है। धातु का अर्थ है जो शरीर को धारण, पोषण और स्थिरता प्रदान करे। भोजन से उत्पन्न आहार रस क्रमशः सात धातुओं में परिवर्तित होकर पूरे शरीर का निर्माण करता है। जब ये धातुएँ संतुलित रहती हैं, तब व्यक्ति स्वस्थ, बलवान और दीर्घायु होता है। आहार से प्राप्त पोषक तत्व क्रमशः इन धातुओं में परिवर्तित होकर शरीर का निर्माण और पोषण करते हैं। चरकाचार्य ने धातु परंपरा को जीवन शक्ति का आधार बताया, वहीं सुश्रुताचार्य ने शल्य चिकित्सा में धातुओं की भूमिका को विशेष रूप से रेखांकित किया। धातु क्षय से दुर्बलता और धातु वृद्धि से विकार उत्पन्न होते हैं।

सप्तधातुओं की क्रमिक सूची

रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र

1. रस धातु

निर्माण: पचे हुए भोजन (आहार रस) से

कार्य: शरीर को पोषण, तृप्ति और स्नेहन, रक्त धातु का निर्माण

ग्लोकल दृष्टि, वर्ष 2, अंक: 3-4, सितम्बर-दिसम्बर 2025

स्थान: हृदय, रक्त वाहिनियों

क्षय के लक्षण: थकान, शुष्कता, चक्कर, प्यास अधिक लगना

वृद्धि के लक्षण: भारीपन, आलस्य, लार अधिक बनना

2. रक्त धातु

निर्माण: रस धातु से

कार्य: जीवन शक्ति (प्राण) का संचार, त्वचा को तेज देना, ऊष्मा बनाए रखना

स्थान: यकृत, प्लीहा, रक्त नलिकाएँ

क्षय के लक्षण: पीलापन, चक्कर, कमजोरी

वृद्धि के लक्षण: त्वचा रोग, फोड़े-फुंसी, रक्तस्राव

3. मांस धातु

निर्माण: रक्त धातु से

कार्य: शरीर की आकृति बनाना, अंगों की रक्षा, बल प्रदान करना

स्थान: मांसपेशियाँ

क्षय के लक्षण: दुर्बलता, अंगों का ढीलापन

वृद्धि के लक्षण: अधिक मांसलता, ग्रंथियाँ

4. मेद धातु

निर्माण: मांस धातु से

कार्य: स्नेहन, ऊर्जा संचय, शरीर को कोमलता

स्थान: पेट, नितंब, वक्ष क्षय के लक्षण: कमजोरी, रुखापन

वृद्धि के लक्षण: मोटापा, आलस्य, मधुमेह की प्रवृत्ति

5. अस्थि धातु

निर्माण: मेद धातु से कार्य: शरीर को आधार, अंगों की रक्षा स्थान: हड्डियाँ, दाँत, नाखून क्षय के लक्षण:

हड्डियों का दर्द, दाँतों की कमजोरी वृद्धि के लक्षण: अतिरिक्त अस्थि वृद्धि, जकड़न

6. मज्जा धातु

निर्माण: अस्थि धातु से कार्य: स्नायू तंत्र का पोषण, मानसिक स्थिरता, बल और ओज स्थान: अस्थि मज्जा,

मस्तिष्क क्षय के लक्षण: चक्कर, स्मृति कमजोर, जोड़ों में रिकता वृद्धि के लक्षण: आंखों में भारीपन, सुस्ती

7. शुक्र धातु

निर्माण: मज्जा धातु से कार्य: प्रजनन शक्ति, तेज, बल और ओज का निर्माण स्थान: संपूर्ण शरीर (विशेषतः

जनन अंग) क्षय के लक्षण: थकावट, कामेच्छा में कमी, बांझपन वृद्धि के लक्षण: कफ वृद्धि, आलस्य

सप्तधातुओं का सार ही ओज है। ओज ही- रोग प्रतिरोधक शक्ति, मानसिक संतुलन, जीवन शक्ति का आधार

है। त्रिदोष और सप्तधातु का संबंध वात अस्थि व मज्जा को प्रभावित करता है पित रक्त और शुक्र को प्रभावित

सुश्री अंजू बाला

करता है कफ रस, मांस और मेद को प्रभावित करता है सप्तधातु सिद्धांत आयुर्वेद का शारीरिक विज्ञान है। यह बताता है कि सही आहार, अग्नि और दिनचर्या से ही धातुएँ स्वस्थ रहती हैं। धातुओं का संतुलन ही स्वस्थ जीवन, दीर्घायु और तेजस्विता का रहस्य है।

मल सिद्धांत

आयुर्वेद में मल को स्वास्थ्य का दर्पण कहा गया है। पुरीष, मूत्र और स्वेद-ये तीन प्रमुख मल शरीर से अपशिष्ट पदार्थों को बाहर निकालते हैं। चरकाचार्य ने कहा है कि मल का उचित निष्कासन स्वास्थ्य के लिए अनिवार्य है। सुश्रुताचार्य ने मूत्र एवं पुरीष की परीक्षा को रोग निदान का महत्वपूर्ण साधन माना। मल अवरोध से अनेक गंभीर रोग उत्पन्न हो सकते हैं आयुर्वेद में शरीर की स्वास्थ्य-व्यवस्था को समझने के लिए त्रिदोष, सप्तधातु और मल-इन तीनों को समान रूप से महत्वपूर्ण माना गया है। मल सिद्धांत यह स्पष्ट करता है कि शरीर में बने अपशिष्ट (Waste Products) केवल त्याज्य पदार्थ नहीं हैं, बल्कि उनका नियमित, संतुलित और समय पर निष्कासन ही वास्तविक स्वास्थ्य का आधार है। आयुर्वेद का प्रसिद्ध सूत्र है-**समधातु मलक्रियाः स स्वस्थ उच्यते।** अर्थात् जिसके दोष, धातु और मल क्रियाएँ संतुलित हों, वही व्यक्ति स्वस्थ है। मल का अर्थ और महत्व मल का अर्थ है-

शरीर में चयापचय (Metabolism) के बाद उत्पन्न वह पदार्थ, जो पोषण हेतु उपयोगी नहीं रह जाता।

यदि मल शरीर में रुक जाए या विकृत हो जाए, तो वही रोग का कारण बनता है।

आयुर्वेद में मुख्य तीन मल

आयुर्वेद ने तीन प्रधान मल माने हैं-

पुरीष (eye / Stool)

मूत्र (Urine)

स्वेद (Sweat)

1. प्रीष (मल)

निर्माण: भोजन के पाचन के बाद स्थूल अवशेष बड़ी आंत में जाकर पुरीष बनता है

कार्य: शरीर से अपशिष्ट बाहर निकालना, वात दोष को स्थिर करना, पाचन तंत्र को संतुलित रखना

सामान्य लक्षण: न अधिक कठोर, न अधिक पतला

दुर्गंध सामान्य

दिन में 1-2 बार निष्कासन

विकृति के लक्षण: अल्प पुरीष: कब्ज, गैस, सिरदर्द, अधिक पुरीष: दस्त, निर्जलीकरण

दुर्गंध, रंग परिवर्तन पाचन दोष का संकेत

दोष संबंध:

वात कब्ज, पित्त दस्त, जलन, कफ भारी, चिपचिपा मल ?

2. मूत्र (Urine)

निर्माण: रस धातु से तरल अपशिष्ट का निष्कासन कार्य:

ग्लोकल दृष्टि, वर्ष 2, अंक: 3-4, सितम्बर-दिसम्बर 2025

जल संतुलन बनाए रखना, विषाक्त पदार्थों को बाहर निकालना, मूत्राशय व गुर्दे का संरक्षण

सामान्य लक्षण: हल्का पीला रंग, दिन में 5-7 बार, बिना जलन के

विकृति के लक्षण: कम मूत्र निर्जलीकरण, अधिक मूत्र मधुमेह की प्रवृत्ति, जलन, दुर्गंध पित्त विकार

दोष संबंध: वात मूत्र अवरोध, पित्त जलन, पीला मूत्र, कफ अधिक, धुंधला मूत्र

3. स्वेद (पसीना)

निर्माण: मेद धातु से, त्वचा के रोमकूपों द्वारा निष्कासन

कार्य: शरीर का तापमान नियंत्रित करना, त्वचा को स्वच्छ रखना, विषहरण (Detoxification)

सामान्य लक्षण: हल्की गंध, मौसम व श्रम अनुसार

विकृति के लक्षण: अल्प स्वेद: रूखी त्वचा, गमभीर सहन न हो, अधिक स्वेद: दुर्गंध, थकान, कमजोरी

दोष संबंध:

वात पसीना कम, पित्त अधिक, तीक्ष्ण गंध, कफ ठंडा, चिपचिपा स्वेद आयुर्वेद में माना जाता है

अग्नि संरक्षण = मल शुद्धि = स्वास्थ्य

आधुनिक जीवन और मल सिद्धांत

आज की समस्याएँ-

अनियमित भोजन, कम पानी, तनाव, जंक फूड

इससे कब्ज, गैस, त्वचा रोग, मधुमेह, मोटापा बढ़ रहे हैं।

समाधान (आयुर्वेदिक):

नियमित दिनचर्या, पर्याप्त जल सेवन, रेशा युक्त भोजन, योग, प्राणायाम, त्रिफला जैसे सौम्य साधन मल सिद्धांत हमें सिखाता है कि स्वास्थ्य केवल भोजन करने से नहीं, बल्कि शरीर से अपशिष्ट को सही समय पर बाहर निकालने से बनता है। मल, मूत्र और स्वेद तीनों की शुद्धि से ही शरीर, मन और इंद्रियाँ स्वस्थ रहती हैं।

आयुर्वेद में अग्नि की अवधारणा (Concept of Agni)

अग्नि आयुर्वेद का प्राणतत्व है। यह न केवल भोजन के पाचन की शक्ति है, बल्कि समस्त चयापचय प्रक्रियाओं का आधार भी है। चरकाचार्य ने अग्नि को जठराग्नि, धात्वाग्नि और भूताग्नि में विभाजित किया। अग्नि की समता से स्वास्थ्य और विषमता से रोग उत्पन्न होते हैं। मंदाग्नि से आम दोष बनता है, जो अनेक रोगों की जड़ अग्नि को जीवन का मूल आधार माना गया है। अग्नि केवल आग नहीं, बल्कि शरीर में स्थित वह जैव-ऊर्जा है जो भोजन को पचाती, धातुओं का निर्माण करती और शरीर को रोगमुक्त रखती है। आयुर्वेद का स्पष्ट कथन है-

‘अग्निमूलं बलं पुंसा’

अर्थात् मनुष्य का बल, स्वास्थ्य और आयु-सब कुछ अग्नि पर ही निर्भर है।

अग्नि का अर्थ और महत्व

अग्नि का अर्थ है-शरीर में होने वाली समस्त पाचन, चयापचय और रूपांतरण की क्रियाएँ।

यदि अग्नि संतुलित है तो भोजन ठीक से पचता है, धातुएँ शुद्ध बनती हैं, ओज बढ़ता है, रोग उत्पन्न नहीं होते।

सुश्री अंजू बाला

यदि अग्नि विकृत है तो आम (toUins) बनता है, त्रिदोष असंतुलित होते हैं, अनेक रोग उत्पन्न होते हैं
आयुर्वेद में अग्नि के प्रकार

आयुर्वेद में कुल 13 प्रकार की अग्नियाँ मानी गई हैं-

1. जठराग्नि (1)

यह सबसे प्रमुख अग्नि है।

स्थान: आमाशय और ग्रहणी

कार्य: भोजन को पचाना, आहार रस का निर्माण

यदि जठराग्नि ठीक है तो बाकी सभी अग्नियों भी संतुलित रहती हैं।

2. भूताग्नि (5)

पंचमहाभूतों के अनुसार पाँच भूताग्नियों होती हैं-

पार्थिव, आप्य, आग्नेय, वायव्य, आकाशीय

कार्य: भोजन में उपस्थित पंचमहाभूतों का शरीर में समायोजन

3. धात्वाग्नि (7)

सप्तधातुओं के लिए सात धात्वाग्नियों होती हैं-

रसाग्नि, रक्ताग्नि, मांसाग्नि, मेदाग्नि, अस्थ्यग्नि, मज्जाग्नि, शुक्राग्नि

कार्य: प्रत्येक धातु का निर्माण और पोषण

जठराग्नि के प्रकार (अवस्था)

1. समाग्नि (Balanced Agni) संतुलित पाचन, अच्छा स्वास्थ्य

2. विषमाग्नि (Vata दोष) कभी पाचन ठीक, कभी खराब, गैस, कब्ज

3. तीक्ष्णाग्नि (Pitta दोष) अत्यधिक भूख, जलन, अम्लता

4. मन्दाग्नि (Kapha दोष) भारीपन, अपच, आलस्य

अग्नि और आम का संबंध

कमजोर अग्नि आम (अपचा पदार्थ)

आम दोषों को दूषित करता है

दोष धातु मल रोग

इसलिए आयुर्वेद में सबसे पहले अग्नि सुधार पर ध्यान दिया जाता है।

अग्नि को संतुलित रखने के उपाय

आहार: समय पर भोजन, गरम, ताजा भोजन, और अधिक भोजन न करें

दिनचर्या: नियमित दिनचर्या, पर्याप्त नींद, तनाव से दूरी

आयुर्वेदिक उपाय:

अदरक, जीरा, सौंठ, त्रिकटु (चिकित्सकीय परामर्श से), उपवास (हल्का, नियंत्रित)

आधुनिक जीवन में अग्नि की प्रासंगिकता आज-फास्ट फूड, देर रात भोजन, मानसिक तनाव, ये सब अग्नि को

ग्लोकल दृष्टि, वर्ष 2, अंक: 3-4, सितम्बर-दिसम्बर 2025

कमजोर करते हैं। यदि अग्नि ठीक रखी जाए तो, पाचन सुधरता है, मोटापा घटता है, रोग प्रतिरोधक शक्ति बढ़ती है।

वस्तुतः अग्नि आयुर्वेद की आत्मा है। अग्नि के बिना न धातु बनती हैं, न बल, न जीवन। स्वस्थ जीवन का रहस्यही है-सम्यक् अग्नि संतुलित आहार-विहार।

आयुर्वेद में आम की अवधारणा (Concept of Ama)

आयुर्वेद में आम को रोगोत्पत्ति का मूल कारण माना गया है। आम कोई विशेष रोग नहीं, बल्कि अपचित, विषैला और अवरोधक पदार्थ है, जो शरीर में कमजोर अग्नि के कारण बनता है। आचार्य चरक ने स्पष्ट कहा है-‘अग्निमान्दद्यात् आमोत्पत्तिः’ अर्थात् अग्नि के मंद होने से ही आम उत्पन्न होता है।

आम का अर्थ है-वह आहार रस जो पूरी तरह पच नहीं पाया हो, चिपचिपा, भारी, दुर्गन्धयुक्त और विष समान हो। यह शरीर के सूक्ष्म स्रोतों (स्रोतस) में जाकर अवरोध उत्पन्न करता है।

आम बनने के कारण

मन्दाग्नि (कमजोर पाचन शक्ति), अधिक, भारी या असंगत भोजन, समय पर भोजन न करना, विरुद्ध आहार (जैसे दूध खट्टा), मानसिक तनाव, चिंता, दिन में सोना

आम के गुण (Lakshana / Guna)

आम के प्रमुख गुण-

गुरु (भारी), स्निग्ध (चिपचिपा), शीतल, दुर्गन्धयुक्त, अवरुद्ध करने वाला

आम के सामान्य लक्षण

भूख न लगना, जी मिचलाना, शरीर में भारीपन, थकान, जीभ पर मोटी परत, बदहजमी, गैस

आम और त्रिदोष का संबंध

आम स्वयं किसी दोष का नहीं,

लेकिन-वात के साथ सामवात पित के साथ सामपित

कफ के साथ सामकफ

इनसे रोग अधिक गंभीर हो जाते हैं।

आम और रोग प्रक्रिया (Samprapti)

आयुर्वेदिक क्रमः

मन्दाग्नि

1 आम निर्माण

दोष दूषण

स्रोतस अवरोध

धातु विकृति

रोग उत्पत्ति

सुश्री अंजू बाला

इसलिए आयुर्वेद में पहले आम पाचन (आमपाचन) किया जाता है ।

आम नाश के उपाय

1. आहार: हल्का, गरम भोजन, मूंग दाल, यवागू, गर्म पानी
2. औषध: सौंठ, अदरक, जीरा, त्रिकटु (वैद्य परामर्श से)
3. विहार: उपवास (हल्का), व्यायाम, पसीना लाने वाले उपाय आम को आधुनिक भाषा में- आधुनिक संदर्भ Metabolic toxins

Undigested waste Inflammatory mediators के समान समझा जा सकता है। आम रोग नहीं, रोग का बीज है। जब तक आम शरीर में रहता है, कोई भी उपचार स्थायी लाभ नहीं देता। इसलिए आयुर्वेद का पहला नियम है- अग्नि दीप्ति आम पाचन स्वास्थ्य आम अपचित आहार का वह विषैला रूप है, जो मंदाग्नि के कारण उत्पन्न होता है। चरकाचार्य ने आम को अधिकांश रोगों का मूल कारण बताया। सुश्रुताचार्य ने आम की उपस्थिति में शल्य कर्म को निषिद्ध माना, क्योंकि इससे जटिलताएँ बढ़ सकती हैं।

स्वास्थ्य की परिभाषा

सुश्रुताचार्य द्वारा दी गई स्वास्थ्य की परिभाषा आयुर्वेद की समग्र दृष्टि को दर्शाती है। दोष, धातु और मल की सम अवस्था, सम अग्नि तथा प्रसन्न आत्मा, इन्द्रिय और मन- ये सभी मिलकर स्वास्थ्य का निर्माण करते हैं। यह परिभाषा आधुनिक स्वास्थ्य अवधारणाओं से भी अधिक व्यापक है।

रोग की उत्पत्ति और चिकित्सा सिद्धांत

आयुर्वेद में रोग को दोष-धातु-मल के असंतुलन का परिणाम माना गया है। चरकाचार्य ने निदान, संप्राप्ति और चिकित्सा के त्रिसूत्र सिद्धांत का प्रतिपादन किया। सुश्रुताचार्य ने शल्य चिकित्सा, क्षार कर्म और अग्नि कर्म के माध्यम से जटिल रोगों के उपचार की विधियाँ विकसित की। चिकित्सा का उद्देश्य रोग नाश के साथ-साथ स्वास्थ्य संरक्षण भी है।

निष्कर्ष

आचार्य चरक और सुश्रुत द्वारा प्रतिपादित आयुर्वेद की आधारभूत अवधारणाएँ आज भी उतनी ही वैज्ञानिक और प्रासंगिक हैं। पंचमहाभूत, त्रिदोष, सप्तधातु, अग्नि, आम और समग्र स्वास्थ्य की अवधारणा आयुर्वेद को एक पूर्ण जीवन विज्ञान बनाती है। आधुनिक जीवन की भागदौड़ और असंतुलन के बीच आयुर्वेद मानवता को स्वस्थ, संतुलित और दीर्घायु जीवन का मार्ग दिखाता है। यही आयुर्वेद की शाश्वत महता और वैज्ञानिकता का प्रमाण है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

- 1) चरक संहिता
- 2) सुश्रुत संहिता
- 3) Lord Basant Ayurveda: The Science of Self Healing
- 4) LMishra Y.C. Ayurvediya Kriya Sarira



GLOCAL
UNIVERSITY
SHAPING GLOBAL MINDS

Approved By



UGC
12(B)

UGC
2(f)

nirf NATIONAL
INSTITUTIONAL
RANKING
FRAMEWORK
RANKINGS 2025



QS WORLD
UNIVERSITY
RANKINGS

ASIA RANKING
801-850

SUBREGIONAL
RANKING
(SOUTHERN ASIA)
254



INTERNATIONAL PACKAGE
52.0* LACS
₹ PER ANNUM

DOMESTIC PACKAGE
20.5* LACS
₹ PER ANNUM

Justdial
India's No.1 Local search engine

AMERICAN EXPRESS

BYJU'S
The Learning App

WC WEALTH CLINIC

FedEx

TATA CAPITAL
We only do what's right for you

ASahi

kotak

BT

Bajaj Motors Limited

TATA
TATA CONSUMERS SERVICES

OILSERV

GENPACT

KARVY

pinclick



DEWAN MEHTA
NATIONAL AWARD FOR BEST
EMERGING B-SCHOOL



GLOCAL UNIVERSITY RECEIVED
AWARD FOR THE
MOST INNOVATIVE
UNIVERSITY WITH
EXCELLENT CAMPUS
OF THE YEAR



TOP UNIVERSITY IN
NORTH INDIA
BY JAGRANJOSH.COM



55+
UG & PG Courses

15+
*Countries Students

24+
*State Students

350+
Acres of Campus Area

700*
Beds Super
Speciality Hospital

ADMISSIONS OPEN FOR 2026-27

To get any further details on admissions & other info, please call

+91-9311320018, +91-9311650087

Glocal University, Delhi Yamunotri Marg (State Highway 57) Mirzapur Pole, Saharanpur U.P.-247121, India

Website: www.glocaluniversity.edu.in



*Terms & Condition Apply

आईएसएसएन नं. 3048-8664

ग्लोकल दृष्टि GLOCAL DRISHTI

वर्ष 2, अंक: 3-4, सितम्बर-दिसम्बर 2025, पृष्ठ 37-40

भारतीय ज्ञान परंपरा एवं विज्ञान फॉर विकसित भारत 2047

प्रो. सत्या मिश्रा

शोध सार

ज्ञान की प्राप्ति भारतीय सभ्यता और संस्कृति का मूल तत्व एवं प्रमुख लक्ष्य रहा है। ऐसा ज्ञान जो केवल बौद्धिक न होकर जीवनमूल्य, अनुभव और नैतिकता का सम्मिश्रण हो। भारतीय ज्ञान परंपरा ने विश्व को आत्मज्ञान, तर्कशास्त्र, गणित, आयुर्वेद, योग, कला, पर्यावरण संवेदना और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' जैसे सार्वभौमिक सिद्धांत प्रदान किए तथापि भारत सरकार द्वारा परिकल्पित विकसित भारत 2047 केवल आर्थिक समृद्धि का नहीं, बल्कि सांस्कृतिक पुनर्जागरण का भी संकल्प है। इस लक्ष्य की प्राप्ति भारतीय ज्ञान परंपरा की पुनर्स्थापना से ही संभव है। प्रस्तुत शोधपत्र में भारतीय ज्ञान परंपरा की दार्शनिक, वैज्ञानिक, सामाजिक और शैक्षणिक आधारभूमि का अध्ययन करते हुए यह प्रतिपादित किया गया है कि विकसित भारत 2047 का वास्तविक मार्ग आधुनिकता और परंपरा के संतुलन में निहित है।

नीति आयोग, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, इंदिरा गाँधी नेशनल सेंटर फॉर द आर्ट (IGNCA) और आल इंडिया काउंसिल फॉर टेक्निकल एजुकेशन इंडियन नॉलेज सिस्टम (AICTE&IKS) जैसे संस्थानों की नीतियों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय ज्ञान प्रणाली भारत को ज्ञान-प्रधान विश्वगुरु के रूप में पुनः प्रतिष्ठित करने की क्षमता रखती है।

मुख्य शब्द -

भारतीय ज्ञान प्रणाली, विकसित भारत 2047, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, नीति आयोग, संस्कृति, आत्मनिर्भरता

विश्लेषण -

भारतीय ज्ञान परंपरा तथा विकसित भारत लक्ष्य के मध्य सेतु संबंध अनेक स्तरों पर दृष्टिगत होते हैं। भारत विश्व की उन कुछ सभ्यताओं में से है जिनकी सांस्कृतिक और दार्शनिक जड़ें आज भी जीवंत हैं। भारतीय समाज में ज्ञान केवल सूचना या शिक्षा का विषय नहीं रहा, बल्कि यह जीवन का मार्गदर्शक तत्व रहा है। वेदों से लेकर उपनिषदों, दर्शनशास्त्र और आधुनिक भारतीय विचारकों तक ज्ञान को साधना और सेवा का माध्यम माना गया। भारत सरकार द्वारा घोषित विकसित भारत 2047 का दृष्टिकोण स्वतंत्रता की शताब्दी पूर्ण होने तक एक ऐसे भारत के निर्माण की कल्पना करता है जो आत्मनिर्भर, सशक्त, तकनीकी रूप से उन्नत और सांस्कृतिक रूप से जागरूक हो।

प्रस्तुत शोधपरक विश्लेषण इस धारणा पर आधारित है कि भारतीय ज्ञान परंपरा न केवल भारत के अतीत का गौरव है, बल्कि विकसित भारत के भविष्य की आधारशिला भी है।

प्रो. सत्या मिश्रा, समाजशास्त्र, नारी शिक्षा निकेतन पी.जी. कॉलेज, लखनऊ

भारतीय ज्ञान परंपरा की दार्शनिक नींव अथवा जड़ें वैदिक साहित्य में हैं। वेदों में ब्रह्मांड की उत्पत्ति, मानव जीवन, प्रकृति और देवत्व की समग्र व्याख्या है। उपनिषदों ने ज्ञान को आत्म साक्षात्कार की प्रक्रिया माना तत्त्वमसि और अहं ब्रह्मास्मि जैसे वाक्यों ने मानव को अपने भीतर झाँकने की प्रेरणा दी। भारतीय दर्शन में छः आस्तिक दर्शन (सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा, वेदांत) और तीन नास्तिक दर्शन (चार्वाक, बौद्ध, जैन) सभी ने ज्ञान की विभिन्न परिभाषाएँ दी, परंतु सभी का अंतिम लक्ष्य सत्य की प्राप्ति रहा। भारतीय ज्ञान की परंपरा में ज्ञान के साथ आचरण का गहरा संबंध रहा है। तैत्तिरीय उपनिषद में कहा गया 'सत्यम् वद, धर्मम् चर, स्वाध्यायान्मा प्रमदः। यह वाक्य बताता है कि ज्ञान का उद्देश्य केवल बौद्धिक विकास नहीं, बल्कि नैतिक विकास भी है।

‘भारतीय विज्ञान, प्रौद्योगिकी और गणित की परंपरा भारतीय ज्ञान परंपरा के अंतर्गत वैज्ञानिक और तर्कसंगत रही है। उदाहरणार्थ –

आर्यभट्ट (476 ई.) ने ‘आर्यभटीय’ में ग्रहों की गति और शून्य की अवधारणा प्रस्तुत की।

भास्कराचार्य (1114 ई.) ने ‘लीलावती और सिद्धांत शिरोमणि’ में गणितीय तर्क दिए।

सुश्रुत संहिता में शल्य चिकित्सा के 300 से अधिक उपकरणों का उल्लेख है।

चरक संहिता में रोग और औषधियों का नैतिक वैज्ञानिक विश्लेषण है।

पाणिनि की अष्टाध्यायी आज भी ‘अभिकल्पनात्मक भाषा विज्ञान’ (computational linguistics) की नींव मानी जाती है।

भारतीय विज्ञान ने प्रकृति के साथ सामंजस्य को विज्ञान का लक्ष्य माना है– ‘प्रकृति में हस्तक्षेप नहीं, सहअस्तित्व के सूत्र पर बल दिया है। आज जब भारत ‘विकसित भारत 2047 के अंतर्गत आत्मनिर्भर विज्ञान नीति, इसरो मिशन, और डिजिटल इंडिया पर बल दे रहा है, तब यह आवश्यक है कि यह विकास भारतीय वैज्ञानिक दृष्टि की आत्मा से जुड़ा हो।

भारत की एक समृद्ध सामाजिक-सांस्कृतिक ज्ञान परंपरा विद्यमान रही है। भारतीय संस्कृति में समाज, व्यक्ति से ऊपर और सम्पूर्ण मानवता तक विस्तृत है। ‘वसुधैव कुटुम्बकम्’ और ‘अतिथि देवो भव’ जैसी संकल्पनाएँ केवल शिष्टाचार नहीं, बल्कि सामाजिक ज्ञान के सिद्धांत हैं। कला, संगीत, नाट्य, लोकगीत, नृत्य, मूर्तिकला, स्थापत्य सब ज्ञान के वाहक रहे हैं। भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में ज्ञान, सौंदर्य, और नीति का समन्वय है। भक्ति आंदोलन ने ज्ञान को लोकभाषाओं में उतारा और समाज में समानता का भाव जगाया। पर्यावरणीय दृष्टि से भी भारतीय ज्ञान परंपरा अद्वितीय रही है। ऋग्वेद में कहा गया है श्माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः। यह भावना आज के सतत विकास (Sustainable Development) के लिए आधार बन सकती है।

भारतीय ज्ञान परंपरा और आधुनिक शिक्षा व्यवस्था के अंतर्गत राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारतीय शिक्षा को वैश्विक प्रतिस्पर्धा और सांस्कृतिक आत्मनिर्भरता दोनों की दिशा में ले जाने का प्रयास है। इस नीति का अनुच्छेद 4.27 स्पष्ट करता है –

‘भारतीय ज्ञान प्रणाली के विविध पक्षों जैसे गणित, खगोलशास्त्र, दर्शन, योग, कला, शिल्प, भाषा, और कृषि – को शिक्षा के सभी स्तरों पर शामिल किया जाएगा।’

प्रो. सत्या मिश्रा

एन. ई. पी. 2020 में 21वीं सदी के कौशल (Critical Thinking] Ethics] Communication) के साथ भारतीय मूल्य शिक्षा का समावेश है। ए.आई.सी.टी.ई. का इंडियन नॉलेज सिस्टम सेल इंजीनियरिंग शिक्षा में वेद, वास्तु, खगोलशास्त्र और पर्यावरणीय सिद्धांतों के अध्ययन को प्रोत्साहित कर रहा है। इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र (IGNCA) भारतीय कला और संस्कृति के पारंपरिक ज्ञान के पुनरुद्धार पर कार्य कर रहा है। इससे यह सिद्ध होता है कि 'विकसित 'भारत' का शैक्षणिक ढाँचा तभी मजबूत होगा जब उसमें भारतीय ज्ञान की आत्मा समाहित हो।

विकसित भारत 2047 (Vision India/2047) भारत सरकार की वह दीर्घकालिक रणनीति है जो स्वतंत्रता की शताब्दी (2047) तक भारत को विश्व की अग्रणी शक्ति बनाने का लक्ष्य रखती है। नीति आयोग 2023 के अनुसार, यह दृष्टि चार स्तंभों पर आधारित है

1. आर्थिक वृद्धि और आत्मनिर्भरता
2. समावेशी समाज और समान अवसर
3. वैज्ञानिक नवाचार और तकनीकी उत्कृष्टता
4. संस्कृतिक आत्मविश्वास और नेतृत्व

इस लक्ष्य की प्राप्ति में भारतीय ज्ञान परंपरा नीति, मूल्य और नवाचार तीनों के रूप में दिशा प्रदान करती है।

भारतीय ज्ञान परंपरा इसमग्न विकास की अवधारणा देती है जिसमें व्यक्ति, समाज, प्रकृति और राष्ट्र चारों का संतुलन आवश्यक है। विकसित भारत का अर्थ है समृद्ध अर्थव्यवस्था, संवेदनशील समाज स्थायी संस्कृति। यथा-

योग और आयुर्वेद भारत को "Global Wellness Hub" बना रहे हैं।

ग्राम स्वराज्य और 'लोकल फॉर वोकल नीति, गाँधीवादी ज्ञान से प्रेरित है।

धारणीय प्रौद्योगिकी और हरित विकास वैदिक पर्यावरण दृष्टि से जुड़ा है।

मेक इन इंडिया और आत्मनिर्भर भारत आत्मबल और कर्मयोग की परंपरा से मेल खाते हैं।

इस प्रकार, प्राचीन ज्ञान और आधुनिक नीति का संगम विकसित भारत का वास्तविक मार्ग बनता है।

चुनौतियाँ और संभावनाएँ

मुख्य चुनौतियाँ:

1. पश्चिमी शिक्षण प्रणाली में भारतीय ज्ञान के प्रति उपेक्षा।
2. पारंपरिक ग्रंथों के आधुनिक व्याख्यान और अनुवाद की कमी।
3. युवाओं में सांस्कृतिक चेतना का हास।
4. इंडियन नॉलेज सिस्टम (IKS) आधारित शोध में संस्थागत सहयोग की सीमाएँ।
- 5 वैश्विक शिक्षा और भारतीय मूल्य ष्टिकोण के बीच संतुलन की कठिनाई।

संभावनाएँ:

1. डिजिटल इंडिया और ए.आई.सी.टी.ई.आई.के.एस. पोर्टल के माध्यम से प्राचीन ग्रंथों का डिजिटलीकरण।
2. एनर् इट्स पीढ़ 2020 के अंतर्गत भारतीय भाषाओं और परंपराओं का शैक्षणिक पुनरुद्धार।

3 नीति आयोग द्वारा नीति निर्माण में सांस्कृतिक घटकों को सम्मिलित करने की पहल।

4. योग, आयुर्वेद, और अध्यात्म के वैश्विक विस्तार से भारत की सौम्य शक्ति (Soft Power) सशक्त होना।

सारांशतः विकसित भारत 2047 की यात्रा केवल आर्थिक विकास की नहीं, बल्कि ज्ञान-आधारित सभ्यता की यात्रा है। भारतीय ज्ञान परंपरा में वह शक्ति है जो विज्ञान और आध्यात्मिकता का संतुलन बनाती है। भारत को विकसित राष्ट्र बनाने के लिए यह आवश्यक है कि हम अपनी परंपरा को आधुनिकता से जोड़ें, न कि उससे विमुख हों। स्वामी विवेकानंद के शब्दों में हमारा भविष्य उस अतीत पर आधारित है, जो हमें यह सिखाता है कि ज्ञान ही शक्ति है और वही राष्ट्र का उत्थान करता है।

भारतीय ज्ञान परंपरा एक मार्गदर्शक है जो 'विकसित भारत' के मार्ग को प्रशस्त करेगा जहाँ तकनीक में प्रगति होगी, पर संस्कृति में विनम्रता बनी रहेगी जहाँ विकास होगा, पर मानवता भी साथ चलेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

1. नीति आयोग (2023) विजन इंडिया / 2047, रिपोर्ट, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया।
2. मिनिस्ट्री अश्वफ एजुकेशन (2020), नेशनल एजुकेशन पॉलिसी (NEP 2020), भारत सरकार।
3. ए. आई. सी. टी. (2021), हैंडबुक ऑन इंडियन नॉलेज सिस्टम्स (आई. के. एस. डिविजन), नई दिल्ली।
4. आई. जी. एन. सी. ए. (2022), इंडियन नॉलेज सिस्टम्स : कॉन्सेप्चुअल फ्रेम वर्क।
5. गाँधी, एम. के. (1909), हिन्द स्वराज, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस।
6. राधाकृष्ण, एस. (1952), इंडियन फिलॉसफी, वॉल्यूम-1। एवम-11, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
7. विवेकानंद, स्वामी (1893), विश्व धर्म संसद में दिया गया सम्भाषण।
8. टैगोर, रवीन्द्रनाथ (1917), नेशनलिज्म, मैक्मिलन।
9. उपनिषद-तैत्तिरीय, छांदोग्य, केन उपनिषद।
10. आर्यभट्ट, आर्यभट्टीय।
11. सुश्रुत, सुश्रुत संहिता।
12. पाणिनि, अष्टाध्यायी।
13. यूनेस्को (2022), रिमैजनिंग अवर फ्यूचर दुगैदर अन्यु सोशल कॉट्रैक्ट फॉर एजुकेशन।
14. आई. सी. एच. आर. (2021), इंडियन सिविलाइजेशन एण्ड कल्चरल हैरिटेज सिरीज।
15. आई. जी. एन. सी. ए. एवं नीति आयोग, कोलाबॉरेटिव पेपर (2023) कल्चरल हैरिटेज एण्ड विकसित भारत विजन।

आईएसएसएन नं. 3048-8664

ग्लोकल दृष्टि GLOCAL DRISHTI

वर्ष 2, अंक: 3-4, सितम्बर-दिसम्बर 2025, पृष्ठ 41-44

भारत में विधिक साक्षरता : एक आवश्यक सामाजिक पहल और उसके समक्ष चुनौतियाँ डा. वैशाली, प्रवीण कुमार

सारांश:

भारतीय समाज की विविधता को देखते हुए विधिक साक्षरता की आवश्यकता और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। यह नागरिकों को उनके संवैधानिक अधिकारों और कानूनी कर्तव्यों की जानकारी देकर उन्हें सशक्त बनाती है। विधिक साक्षरता न केवल न्याय तक पहुँच का साधन है, बल्कि एक मजबूत लोकतंत्र की आधारशिला भी है। भारत में अभी भी अधिकांश लोग विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों, महिलाओं और वंचित वर्गों में कानूनी ज्ञान से वंचित हैं। राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण (NALSA) तथा अन्य संस्थानों द्वारा विधिक साक्षरता हेतु विभिन्न कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं, परंतु शिक्षा की कमी, भाषा की जटिलता, सामाजिक पूर्वाग्रह एवं संसाधनों की अनुपलब्धता प्रमुख बाधाएँ हैं। न्यायपालिका द्वारा दिए गए ऐतिहासिक निर्णयों ने इस दिशा में मार्गदर्शन किया है। विधिक साक्षरता को शिक्षा, मीडिया और सामाजिक संस्थाओं के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाकर ही न्यायसंगत और समावेशी समाज की स्थापना संभव है।

भूमिका:

भारतीय समाज एक विविधतापूर्ण और बहुलतावादी समाज है, जहाँ भाषा, धर्म, जाति, संस्कृति और शिक्षा के स्तर में अत्यधिक भिन्नता है। ऐसे समाज में विधिक साक्षरता (Legal Literacy) की महत्ता और भी अधिक बढ़ जाती है, क्योंकि यह प्रत्येक नागरिक को उसके अधिकारों और कर्तव्यों की जानकारी देकर उसे सशक्त बनाती है।

भारत एक लोकतांत्रिक राष्ट्र है, जहाँ संविधान ने प्रत्येक नागरिक को समानता, स्वतंत्रता, न्याय और गरिमा का अधिकार प्रदान किया है। परंतु यदि नागरिकों को इन अधिकारों की जानकारी ही नहीं होगी, तो वे उन्हें प्रभावी रूप से प्राप्त नहीं कर सकते। इसीलिए विधिक साक्षरता न केवल एक सामाजिक आवश्यकता है, बल्कि यह लोकतंत्र की मजबूती के लिए भी आवश्यक है।

विधिक साक्षरता की परिभाषा:

विधिक साक्षरता से पूर्व हमें यह समझना होगा कि साक्षरता क्या है? साक्षरता का अर्थ केवल पढ़ने और लिखने की क्षमता नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति की सोचने, समझने और अभिव्यक्त करने की शक्ति को भी दर्शाती है। यह सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास का मूल आधार है। एक साक्षर व्यक्ति न केवल अपने

कु० वैशाली, सहायक प्रोफेसर, ग्लोकल ला स्कूल, ग्लोकल विश्व विद्यालय सहारनपुर (vaishali@theglobaluniversity-in)
प्रवीण कुमार, टीचिंग असिस्टेंट, ग्लोकल ला स्कूल, ग्लोकल विश्व विद्यालय सहारनपुर (parveen@theglobaluniversity-in)

अधिकारों को समझ सकता है, बल्कि समाज में जिम्मेदारी से भागीदारी भी निभा सकता है। साक्षरता से रोजगार के अवसर बढ़ते हैं और जीवन स्तर में सुधार होता है। भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में सार्वभौमिक साक्षरता का होना लोकतंत्र की मजबूती के लिए अत्यंत आवश्यक है। यह समावेशी विकास की नींव है।

विधिक साक्षरता का अर्थ है, नागरिकों को उनके विधिक अधिकारों, कर्तव्यों, कानूनी प्रक्रियाओं तथा न्याय प्रणाली की जानकारी प्रदान करना ताकि वे कानून का पालन करते हुए अपनी सुरक्षा कर सकें और जरूरत पड़ने पर कानून का सहारा ले सकें। NALSA (National Legal Services Authority) के अनुसार: "Legal literacy means making people aware of their rights, duties, and remedies under the legal system and enabling them to use these tools to improve their lives-"

सरल शब्दों में कहा जाए तो विधिक साक्षरता वह प्रक्रिया है, जिससे आम व्यक्ति यह जान पाता है कि उसके क्या-क्या अधिकार हैं, और जब उसका शोषण होता है तो वह किस कानून का सहारा ले सकता है तथा किस न्यायालय में अपनी बात रख सकता है।

भारत में विधिक साक्षरता की आवश्यकता:

भारत जैसे देश में अधिकतर नागरिकों को उनके मौलिक और विधिक अधिकारों की जानकारी नहीं है। ऐसे में वे अक्सर शोषण, भ्रष्टाचार, अन्याय और भेदभाव के शिकार हो जाते हैं। गरीब और अशिक्षित वर्गों को यह भी पता नहीं होता कि उन्हें मुफ्त कानूनी सहायता भी उपलब्ध है। इसका कारण उनकी विधिक जानकारी की कमी है। लोग अदालतों और कानून से डरते हैं क्योंकि वे उन्हें जटिल और खर्चीला मानते हैं। विधिक साक्षरता इस दूरी को कम कर सकती है।

यदि नागरिक विधिक रूप से साक्षर होंगे, तो वे सरकारी तंत्र के भ्रष्टाचार, दलालों और बिचौलियों से स्वयं को बचा सकते हैं। एक विधिक रूप से जागरूक समाज ही सशक्त लोकतंत्र की नींव रख सकता है। विधिक साक्षरता नागरिकों को निर्णय लेने की क्षमता देती है।

भारत में विधिक साक्षरता की वर्तमान स्थिति:

भारत में विधिक साक्षरता की स्थिति अभी भी संतोषजनक नहीं है, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों, महिलाओं, अनुसूचित जातियों/जनजातियों और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों में। कई लोग संविधान, कानून, प्रशासनिक अधिकारों, और न्यायिक प्रक्रिया से अनभिज्ञ हैं। राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण (NALSA) की 2022 की रिपोर्ट के अनुसार, भारत में 60% से अधिक आबादी विधिक रूप से अनजान है। इससे न केवल व्यक्ति का नुकसान होता है, बल्कि सामाजिक अन्याय और आर्थिक असमानता को भी बढ़ावा मिलता है।

भारत सरकार के प्रयास:

भारत सरकार और न्यायपालिका ने विधिक साक्षरता के प्रसार के लिए कई पहलें की हैं, जिनमें प्रमुख हैं:

1. राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण (NALSA) सन् 1995 में राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण (एनएएलएसए) का गठन विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 के तहत समाज के कमजोर वर्गों को

डॉ. वैशाली, प्रवीण कुमार

निःशुल्क विधिक सेवाएं प्रदान करने तथा विवादों के सौहार्दपूर्ण समाधान के लिए लोक अदालतों का आयोजन करने के लिए किया गया है। वर्तमान में भारत के सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश माननीय न्यायमूर्ति सूर्यकांत, नालसा के कार्यकारी अध्यक्ष हैं। नालसा का मुख्यालय भारत के सर्वोच्च न्यायालय, तिलक मार्ग, नई दिल्ली में है।

2. विधिक साक्षरता मिशन: NALSA के अंतर्गत राष्ट्रीय, राज्य, जिला और तालुका स्तर पर विधिक साक्षरता कार्यक्रम चलाए जाते हैं, जिसमें वकील, छात्र, सामाजिक कार्यकर्ता भाग लेते हैं।

3. लोक अदालतों का आयोजन: विवादों के सुलझाव में तेजी लाने और लोगों को कानून के पास लाने के लिए लोक अदालतें आयोजित की जाती हैं। यहाँ पर कम खर्च में त्वरित न्याय मिलता है।

4. स्कूल और कश्चलेज स्तर पर विधिक शिक्षा: कई स्कूलों और कश्चलेजों में विधिक साक्षरता क्लब बनाए गए हैं, जहाँ छात्रों को उनके अधिकारों के बारे में बताया जाता है।

5. डिजिटल माध्यमों का उपयोग: सरकार ने ई-कॉर्ट्स, न्यायसंग्रह ऐप, ऑनलाइन पोर्टल और सोशल मीडिया का सहारा लेकर विधिक जागरूकता बढ़ाने का प्रयास किया है।

चुनौतियाँ:

हालांकि कई प्रयास किए गए हैं, लेकिन विधिक साक्षरता की राह में अब भी कई बाधाएँ मौजूद हैं।

- **शिक्षा का अभाव:** विधिक साक्षरता तभी संभव है जब व्यक्ति मूलभूत रूप से पढ़ा-लिखा हो। भारत में अब भी करोड़ों लोग अशिक्षित हैं।
- **ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों की उपेक्षा:** विधिक साक्षरता के कार्यक्रम अधिकतर शहरी क्षेत्रों तक सीमित हैं। गाँवों में जागरूकता अभियान की पहुँच बहुत सीमित है।
- **भाषा और संप्रेषण की समस्या:** कानूनी भाषा आम नागरिक की समझ से परे होती है। विधिक शब्दावली सरल भाषा में उपलब्ध नहीं है।
- **आर्थिक असमानता:** गरीब तबका रोजमर्रा की जरूरतों में इतना उलझा होता है कि विधिक अधिकारों की जानकारी उसके लिए गौण हो जाती है।
- **सामाजिक-पारंपरिक बाधाएँ:** विशेष रूप से महिलाओं, दलितों और आदिवासियों में अभी भी पारंपरिक सोच और सामाजिक दबाव उन्हें कानूनी सहायता लेने से रोकते हैं।

विधिक साक्षरता को बढ़ावा देने के सुझाव:

- प्राथमिक शिक्षा में विधिक शिक्षा को जोड़ना
- स्थानीय भाषाओं में सामग्री उपलब्ध कराना
- ग्राम पंचायत स्तर पर विधिक साक्षरता कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ।
- गैर-सरकारी संगठन (NGOs) और स्वयंसेवी संस्थाएँ विधिक साक्षरता को गाँव-गाँव तक पहुँचा सकती हैं।
- रेडियो, टीवी, सोशल मीडिया और अख़बारों के जरिए लोगों तक कानून की जानकारी पहुँचाई जा सकती है।

है।

- विधिक विषयों पर आधारित फिल्में, नुक्कड़ नाटक, जनगीत इत्यादि के माध्यम से आम लोगों में रुचि के साथ जानकारी दी जा सकती है।

न्यायपालिका की भूमिका:

भारतीय न्यायपालिका ने भी विधिक साक्षरता के क्षेत्र में सराहनीय योगदान दिया है। सुप्रीम कोर्ट और विभिन्न हाईकोर्ट ने समय-समय पर ऐसे फैसले दिए हैं, जिनसे नागरिकों को उनके अधिकारों की जानकारी मिली। इस दिशा में एक महत्वपूर्ण वाद हुस्न आरा खातून बनाम बिहार राज्य का है जिसमें सुप्रीम कोर्ट ने त्वरित न्याय और निःशुल्क विधिक सहायता को नागरिकों का मौलिक अधिकार घोषित किया।

इसके अलावा कुछ अन्य महत्वपूर्ण वाद इस प्रकार से हैं -

एम.एच. होस्कोट बनाम महाराष्ट्र राज्य

केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य

लक्ष्मीकांत पांडे बनाम भारत संघ

शेम सिंह बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य

पी.यू.सी.एल बनाम भारत संघ

निष्कर्ष:

भारत में विधिक साक्षरता केवल एक कानूनी पहल नहीं, बल्कि सामाजिक सशक्तिकरण का एक आवश्यक माध्यम है। जब तक देश का अंतिम नागरिक भी अपने अधिकारों और कानूनों के प्रति जागरूक नहीं होगा, तब तक एक समान, न्यायसंगत और मजबूत लोकतंत्र की कल्पना अधूरी रहेगी। इसलिए आवश्यक है कि विधिक साक्षरता को शिक्षा, सामाजिक विकास, महिला सशक्तिकरण और ग्रामीण विकास से जोड़ते हुए समावेशी रूप से आगे बढ़ाया जाए। यदि विधिक साक्षरता हर नागरिक तक पहुँच सके, तो न केवल न्याय तक पहुँच आसान होगी, बल्कि भ्रष्टाचार, अन्याय और भेदभाव जैसी सामाजिक बुराइयों पर भी अंकुश लगाया जा सकेगा।

बालश्रम के सम्पूर्ण उन्मूलन के लिए , अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के द्वारा किये, प्रयासों का सामाजिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन

नोरे मनव्वर, डॉ. आतेका बानो

सार बालश्रम के सम्पूर्ण उन्मूलन के लिए अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के द्वारा किये गये प्रयासों का एक सामाजिक व विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत कर इस शोध पत्र के माध्यम से बालकों को उनका सर्वणिम बचपन लौटाने के लिए विश्व के प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय स्वयं सेवी संस्थाओं के द्वारा जो भी प्रयास किया गया यह एक सराहनीय कदम रहा है। इसमें अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक संघ ने सभी प्रकार के बेगार श्रम को सभी रूपों में रोक लगाने की बात कही है चाहे उसकी प्रकृति कैसी ही हो। जिससे की बच्चों की सामूहिक सौदेबाजी को रोका जा सके व बाल कल्याण व बच्चों के 14 वर्ष तक कार्यस्थल पर काम करने को मनाही की बात करता है। इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय पुर्ननिर्माण एवं विकास बैंक ने भी बालश्रम को भारत के लिए अपने एजेन्ट में प्रमुखता प्रदान की है। तथा भारत में बालश्रम के बढ़ते आँकड़ों ने भारत के सन्दर्भ में विश्व बैंक की सहयोगात्मक कियाशीलता को और भी बढ़ा दिया गया है। जनवरी 2021 की रिपोर्ट के अनुसार 10.1 मिलियन बच्चे कार्यरत हैं तथा इस प्रकार संयुक्त राष्ट्र शैक्षणिक वैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक संगठन (युनेस्को) का भी मूल उद्देश्य शान्ति एवं सुरक्षा तथा यह संस्था अपना नैतिक कर्तव्य का अनुपालन करते हुए युनेस्को ने भी बच्चों के शैक्षणिक वैज्ञानिक और सांस्कृतिक देखभाल की बीड़ा उठाया। इस प्रकार विश्व व्यापार संगठन विश्व भर में विभिन्न स्वरूपों में बालश्रम की मौजूदगी के कारण सभी पर एक ही तरह का सख्त मानक बनाने का सुझाव दिया। संयुक्त राष्ट्र की महासभा के द्वारा 10 दिसम्बर 1948 को सदस्य देशों और सभी लोगों के लिए उपलब्धि यह कि बच्चों की सुविधा व सहायता तथा विशेष सुरक्षा का प्रबन्ध करें। तथा महासभा के द्वारा 20 नवम्बर 1959 को संयुक्त राष्ट्र संघ ने सर्वसम्मति से बच्चों के अधिकारों से सम्बन्धित प्रस्ताव स्वीकार किया तथा मानव के मूलभूत अधिकारों में बच्चों की गरिमा एवं महत्व के प्रति अपने विश्वास को पुनः दुहराया गया इस प्रकार इस शोधपत्र के माध्यम से शोधकर्ता ने बालश्रम को विभिन्न कन्वेंशन व संयुक्त राष्ट्र के द्वारा किये गये प्रयासों का वर्णन प्रस्तुत इस लघु शोध में किया है।

परिचय शरीर या मानव मन के वे सभी प्रयास जो इस इनाम की आशा से किया जाता है। वो श्रम कहलाता है। बालश्रम के अर्न्तगत ऐसा काम उन बच्चों से करवाया जाता है। जिससे उसके बचपन से वंचित कर देता है। जो उसकी क्षमता और गरिमा तथा शारिरिक व मानसिक उन्नति के लिए हारिकारक होता है। बालश्रम आज के युग के लिए कोई नई समस्या नहीं है। यह एक सामाजिक समस्या है। जो कि पुरे विश्व में

Noray Manavver¹, Dr. Aateka Bano^{*2}

1.Ph.D. Scholar (Law), Glocal Law School, Glocal University, U.P. - 247121, India.

2.Associate Professor, Glocal Law School, Glocal University, U.P. - 247121, India.

*Corresponding Author: Aateka83@gmail.com ORCID Id: <https://orcid.org/0009-0006-7481-7840>

विद्यमान ही औद्योगिक कान्ति के दौरान उत्पादन की विधा में मौलिक परिवर्तन आया। मानव शक्ति का उपयोग मशीनरी के रूप में किया जाने लगा, और मानव शक्ति श्रमिक के रूप में विकसित हो गयी जिसका शारीरिक विकास अभी अधूरा है। लेकिन उसके अंग अधिक कोमल हैं। महिलाओं और बच्चों के श्रम की माँग पूँजीपतियों द्वारा की गई है ताकि इनका इस्तेमाल मशीनरी के रूप में किया जा सके।

इस प्रकार बालक सदैव से ही एक प्रतिनिधित्व मौन, अल्पसंख्यक वर्ग रहा है। वे इतिहास के उन कुछ ऐसे वर्गों में से हैं जिन्हें मार्टिन लूथर किंग जार्ज ने भी बॉडीज कोई नहीं के रूप में इंगित किया है। प्रथम विश्व युद्ध के बाद कुछ स्वयं सेवी संस्थाएँ बालकों के अधिकारों के प्रति जागरूक हुईं और सम्भवतः अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बच्चों के अधिकारों के संरक्षण का विकास 1924 राष्ट्र संघ के तत्वाधान में प्रारम्भ हुआ जब जेनेवा घोषण पत्र अंगीकृत किया गया सर्वप्रथम राष्ट्र संघ ने बाल अधिकारों को मान्यता प्रदान करते हुए घोषणा यह कि अगर बच्चों के अधिकारों को पर्याप्त संरक्षण प्रदान करते उनकी प्रति सामाजिक बुराइयों के यथा दासता बालश्रम अवयस्कों के साथ होने वाले यौन शोषण एवं अत्याचार के विरुद्ध विशेष कदम उठाए जाने चाहिए। संयुक्त राष्ट्र संघ ने लोगों के मूलभूत मानव अधिकारों जिसमें प्रत्येक व्यक्ति की प्रतिष्ठा और महत्व में अपनी निष्ठा व्यक्त की। इस प्रकार निःसन्देह रूप से प्रत्येक गरीमा में बच्चों भी सम्मिलित हैं। तथा आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक या मानव कल्याण सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को सुलझाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग प्राप्त करना तथा मानव अधिकारों के लिए किसी भी प्रकार के जाति, लिंग भाषा या धर्म पर आधारित भेदभाव के बिना सबके मौलिक स्वतन्त्रता के लिए आदर की भावना को बढ़वा और प्रोत्साहन देना होगा यह भी सुरक्षा की परिधी में निःसन्देह रूप से बच्चे भी आते हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय बालश्रम उन्मूलन के लिए अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के द्वारा किये गए प्रयास श्रम संगठन वर्साय की सन्धि के भाग के रूप में सन 1919 में स्थापित किया गया था। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की सामूहिक सौदेबाजी का अधिकार, रोजगार की न्युनतम आयु बालश्रम उन्मूलन को महिलाओं एवं पुरुषों के समान कार्य के लिए समान वेतन का अधिकार श्रमिकों को मिले बाल कल्याण और मातृत्व सुरक्षा के लिए प्रावधान किए गए ताकि बच्चों का सर्वांगीण विकास हो सके। महिला एवं बाल श्रमिकों के लिए सामाजिक सुरक्षा के लिए कार्य करना तथा उनके स्वास्थ्य सुरक्षा और कल्याण के लिए कार्य करना ही अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का मुख्य उद्देश्य था।

बालश्रम उन्मूलन के लिए विभिन्न प्रकार के लिए कन्वेंशन किए गए हैं। जो इस प्रकार हैं।

(1) बालश्रम सम्बन्धी कन्वेंशन संख्या 5 न्युनतम आयु (उद्योग) 1919 – इस प्रकार आई. एल.ओ.की प्रथम सत्र वाशिंगटन डी.सी. में हुई। जिसमें 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को किसी भी सार्वजनिक या निजी प्रपिष्ठान में नियोजित नहीं किए जाने थे। इस कन्वेंशन का मुख्य बात यह था कि बच्चों की निधारित आयु 14 वर्ष निर्धारित किया गया।

(2) कन्वेंशन संख्या 6 उद्योग 1919 इस अभिसमय में 18 वर्ष से कम आयु के नवयुवक को किसी भी प्रकार

नोरे मनव्वर, डॉ. आतेका बानो

के सार्वजनिक या निजी उपक्रमों में रात में काम करने को प्रतिबंधित कर दिया गया है।

(3) कन्वेंशन संख्या 10 चिकित्सा परीक्षण नवयुवकों का समुद्र अभिसमय 1921 इस अभिसमय में समुद्री कार्य सम्बन्धी कार्य के नियोजन में बच्चों के व नवयुवकों के लिए चिकित्सा परीक्षण अनिवार्य बना दिया गया और बालकों को जो 18 वर्ष से कम उम्र के ही उनका सामर्थ्य-प्रमाण पत्र संबंधित अधिकारी को प्रस्तुत करना अनिवार्य बना दिया गया।

(4) कन्वेंशन संख्या 29 बेगार श्रम 1930 इस कन्वेंशन में बच्चों से बेगारी लिये जाने वाली प्रथा को एक सामाजिक बुराई मानकर अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने वर्ष ने 1930 में बेगार अम उन्मूलन कन्वेंशन का आयोजन जेनेवा में करवाया जिसमें बेगारी प्रथा को सम्पूर्ण उन्मूलन के बारे समस्त देशों ने अपनी संकल्पों में समाप्ति की बात कही।

इस कन्वेंशन में 14 वर्ष से (5) कन्वेंशन संख्या 33 न्यूनतम उम्र (गैर औद्योगिक नियोजन) 1932 कम उम्र के बच्चों का नियोजन गैर- औद्योगिक रोजगारों में प्रतिबंधित कर दिया गया तथा खदान के अन्दर काम करने वाले किसी भी व्यक्ति की आयु 16 वर्ष से कम को प्रतिबंधित कर दिया गया।

बालश्रम उन्मूलन के एक्शन कार्यक्रम इस कार्यक्रम को अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा बालश्रम की एक सामाजिक बुराई को मुख्य रूप से समाप्त करने के लिए प्रारम्भ किया गया। (आईपेक कार्यक्रम का उद्देश्य निम्नलिखित ही जो इस प्रकार है।

(1) बालश्रम के क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की कियाशील गतिविधि को और दृढ़ता प्रदान करना।

(2) निवेदन करने पर अर्न्तराष्ट्रीय श्रम संगठन के सभी सदस्य राष्ट्रों को तकनीकों सहयोग प्रदान करना।

आईपेक कार्यक्रम दृढतापूर्वक विश्वास रखता है। कि

बालश्रम का प्रभावशाली ढंग से उन्मूलन धीरे-धीरे किया जा सकता है आईपेक शासन श्रमिकों नियोजको संगठनों गैरसरकारी संस्थाओं शिक्षाविदों बच्चों एवं उनके माता-पिता का आह्वान करता है कि वे सभी में सम्मिलित रूप से इस अत्यधिक दोषपूर्ण बालश्रम की समस्या के निम्नलिखित क्षेत्रों में अपना पूर्ण सहयोग प्रदान करें। जिससे कि बालश्रम की जो समस्या है। उससे जल्द समाज को छुटकारा मिल सकें।

बालश्रम उन्मूलन के लिए युनिसेफ के द्वारा किये गये प्रयास बालश्रम उन्मूलन की दिशा में यूनिसेफ ने एक ऐतिहासिक पहल की तथा यह एक ऐसी शान्तिप्रिय व कांतिकारी एक संगठन है। जिसकी स्थापना द्वितीय विश्व युद्ध के बाद सन् 1946 में यूरोप में के बच्चों का आपात राहत मुहैया कराने के लिए की गई थी। इसके सहयोग कार्यक्रम कुल 138 देशों में चल रहे हैं।

यूनिसेफ बालश्रम उन्मूलन के क्षेत्र में सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों को महत्वपूर्ण समर्थन एवं सहयोग प्रदान करती है। यूनिसेफ प्रत्यक्ष रूप से बालश्रम उन्मूलन में संलग्न नहीं ही और कहा जाय तो बाल श्रमिकों की खतरनाक एवं गैर-खतरनाक कामों से मुक्त कराने में यह प्रत्यक्ष रूप जुड़ी नहीं है। लेकिन इन बाल श्रमिकों के लिए जो पुर्नवास कार्यक्रम और विशेषकर विशेष विद्यालयों एवं अन्य पुर्नवास सह- कल्याण केन्द्रों को सहयोग एवं आवश्यक समर्थन प्रदान करना है यूनिसेफ का यह विश्वास है कि प्रत्येक बच्चे कि अपनी बचपन जीने तथा शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है और बाल मजदुरी को मुख्यतः सभी बच्चों के लिए

बुनियादी शिक्षा उपलब्ध कराकर समाप्त किया जा सकता है। साथ ही साथ प्रत्येक बच्चे के काम करने की स्थिति को सुधारने के कल्याणकारी उपाय इस कुप्रथा को अभयदान देकर शाश्वत ही बनाते हैं। और उसे बचाना चाहिए। बाल अधिकार प्रदान करना बालश्रम उन्मूलन सम्बन्धी उपाय बताना इत्यादि।

भारतीय संविधान के भाग 4 अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की परिपाटियों की कसौटी पर भारत के अनुच्छेद 51 में भारतवर्ष पर निम्नलिखित कर्तव्य अधिरोपित किए गए कि द्धकऋ अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा की अभिवृद्धि करे

(ख) राष्ट्रों के बीच न्यायसंगत और सम्मानपूर्ण सम्बन्धों को बनाए रखने

(ग) संगठित लोगों के एक दुसरे के व्यवहारों में अन्तर्राष्ट्रीय विधि और संधि बाध्यताओं के बीच आदर बढ़ाने का है।

(घ) अन्तर्राष्ट्रीय विवादों के माध्यम द्वारा निपटारे के लिए प्रोत्साहन देने का प्रयास करेगा।

अन्तर्राष्ट्रीय करारों को स्वीकार करने के पश्चात् प्रत्येक राष्ट्र का यह कर्तव्य हो जाता है। कि वह उन नियमों के समुचित कियान्वयन की व्यवस्था करें। बशर्ते कि यदि उपरोक्त समझौते निम्नलिखित में बाधा उत्पन्न न करे।

(क) यदि नागरिकों के न्याय अधिकार को प्रभावित न करें।

(ख) राज्य में पूर्व प्रचलित कानून का पुर्नसुधार

(ग) व्यक्तिगत सम्पत्ति स्वतन्त्रता जिसे संविधान ने प्रदान किया है। यदि यह प्रभावित होता है। तो राष्ट्र अपना व्यक्तिगत कानूनों को लागू करने के लिए स्वतंत्र है।

(घ) यदि भारतीय कोष से किसी विदेशी राष्ट्र को धन देने सम्बन्धी बात हो तो वहाँ राष्ट्र अपना व्यक्तिगत कानून लागू करने के लिए स्वतंत्र है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की न्यूनतम आयु स्वास्थ्य परीक्षण तथा रात्रि में बच्चों के नियोजन के सम्बन्ध में प्रतिपादित मानक नियमों के पालन का भारत ने सदैव ही यथासम्भव प्रयत्न किया। नियोजन की न्यूनतम आयु विषयक समझौते के आधार पर भारत सरकार ने वर्ष 1974 ई. में बच्चों के लिए एक राष्ट्रीय नीति के अर्न्तगत यह कहा गया कि राज्य सरकार 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों के लिए निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था आय के स्रोतों के आधार पर समयावधि के बीच करेंगे। विद्यालयों में समाज के गरीब बालक और बालिकाओं के शिक्षा और उनके मानसिक विकास पर विशेष ध्यान दिया जाएगा तथा श्रेष्ठतम प्रयास किए जाएंगे। प्राथमिक पाठशाला में बच्चों की शिक्षा सम्बन्धी अनौपचारिक योजना बनाने का दायित्व राज्य सरकार का होगा।

जहाँ तक नियोजनों में नियोजित बच्चों के स्वास्थ्य परीक्षण के मानकों को प्रश्न है तो भारतीय विधि के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता ही कि अनेक नियोजनों में नियोजित बच्चों के स्वास्थ्य परीक्षण सम्बन्धी भारतीय कानून उपयुक्त है। किन्तु गैर- औद्योगिक व्यसायों में नियोजित बच्चों के स्वास्थ्य परीक्षण के सम्बन्ध में भारतीय कानून में कोई भी व्यवस्था नहीं है। जबकि कारखाना अधिनियम के अनुसार 18 वर्ष के बच्चों का स्वास्थ्य परीक्षण अनिवार्य किया गया है। जबकि खदान के ऊपर कार्य करने वाले बच्चों के स्वास्थ्य परीक्षण

नोरे मनव्वर, डॉ. आतेका बानो

की कोई भी व्यवस्था नहीं है।

भारत जैसे विकासशील राष्ट्र जनसंख्या और गरीबी के अतिशय दबाव में रहते हुए भी अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमयों के अनुपालन के प्रति पूर्णतया प्रतिबद्ध है। इसके निमित्त उसने सार्थक कदम भी उठाए हैं। और विश्वव्यापी अन्तर्राष्ट्रीय नियमों के परिप्रेक्ष्य में अन्य राष्ट्रों से कदम मिलाकर चलने को अग्रसर भी हुआ है किन्तु साथ ही यह भी सत्य है कि अपने सभी प्रयत्नों के बालजूद अभी तक वह अन्तर्राष्ट्रीय नीति समुदाय को चाहिए कि वे भारत विशेष की परिस्थितियों को समझें हुए इसके प्रति लचीला दृष्टिकोण अपनाएँ तथा अन्तर्राष्ट्रीय दबाव सृजन के स्थान पर सहयोगात्मक दृष्टिकोण अपनाए।

अन्तर्राष्ट्रीय पुर्ननिर्माण एवं विकास बैंक (विश्व बैंक) तथा अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष (आई. एम. एफ.) इस संस्था का उदय सन् 1944 में ब्रेटनवुडस से दो अन्तर्राष्ट्रीय बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष। इन दोनों वित्तीय निकायों की स्थापना सन् 1945 में हुई। वहीं देश विश्व बैंक का सदस्य हो सकता है जो अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष का सदस्य देश होता है। इस प्रकार दोनों ही संस्थाओं की सदस्यता साथ-साथ चलती ही वर्तमान में 180 देश विश्व बैंक के सदस्य हैं। इसका मुख्यालय वाशिंगटन में हो। सम्पूर्ण विश्व के अर्थ प्रबन्धन तथा उनके उचित विनिमय और विनियोग का उत्तरदायित्व इन दोनों अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं पर ही विश्व बैंक सदस्य राज्यों के आर्थिक सुविधाओं के विकास के लिए ऋण उपलब्ध कराता है।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक गतिविधियों को बढ़ा देने के लिए अतिरिक्त विश्व बैंक के कतिपय अन्य सामाजिक लक्ष्य भी हैं। जिसमें बालश्रम का उन्मूलन भी सम्मिलित है। विश्व में बालश्रम को कम करने तथा खत्म करने में प्रभावित देशों की सहायता करने की प्रतिबद्धता इसके अधिकाधिक दस्तावेजों में परिलक्षित है। गरीबी को बालश्रम का मुख्य कारण मानने वालों तर्कों के अतिरिक्त विश्व बैंक ने बालश्रम के विश्वव्यापी उन्मूलन में जो उत्तरदायित्व निभाए ही यो सराहनीय है। सीधे आर्थिक मदद की बात हो अथवा अपने कार्यक्रमों आदि के माध्यम से सामान्य जनचेतना जागृत कराने की बात हो विश्व बैंक बालश्रम उन्मूलन के किसी भी प्रयास से पीछे नहीं रहा है।

विश्व बैंक ने बालश्रम को भारत के लिए अपने एजेण्डे में प्रमुखता प्रदान की है। भारत में बालश्रम की गम्भीरता को देखते हुए विश्व बैंक ने विकास के मुझे के रूप में इस पर गम्भीरता से सोचना आरम्भ कर दिया। भारत में बालश्रम के बढ़ते आँकड़ों ने भारत के सन्दर्भ में विश्व बैंक की सहयोगात्मक कियाशीलता को भी बढ़ा दिया है। इस प्रकार जनवरी 2003 के प्रथम सप्ताह में प्रकाशित हुई स्वयं विश्व बैंक की वर्ष 2002-2003 की रिपोर्ट में यह स्पष्ट किया है। कि भारत में 6 करोड़ से भी अधिक बालश्रमिक मौजूद हैं। जो कि विश्व के किसी भी देश की तुलना में सर्वाधिक है। इन 6 करोड़ बालश्रमिकों में डेढ़ करोड़ बधुवा मजदुर ही

इस संगठन की संयुक्त राष्ट्र शैक्षणिक वैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक संगठन (युनेस्को) स्थापना 4 नवम्बर 1946 को लन्दन में हुए सम्मेलन के द्वारा विधान बनाकर की गई है। इसे 14 दिसम्बर 1946 को संयुक्त राष्ट्र संघ के साथ जोड़ दिया गया। इसका मुख्यालय फ्रांस की राजधानी पेरिस में ही इस प्रकार इस संस्था का मूल उद्देश्य शान्ति एवं सुरक्षा के लिए योगदान करना है। जिनकी पूर्ति हेतु यह शिक्षा, विज्ञान तथा संस्कृति के द्वारा राष्ट्रों के मध्य निकटता की भावना के निर्माण को सर्वश्रेष्ठ उपाय मानती ही सन् 1989 में संयुक्त राष्ट्र संघ की

महासभा के द्वारा बाल अंगीकृत कर लिए जाने के बाद से संयुक्त राष्ट्र अभिसमय को अंगीकृत कर लिए जाने के बाद से संयुक्त राष्ट्र संघ के लगभग समस्त अभिकरणों का यह कर्तव्य हो जाता है कि वे बालकों के अधिकारों को मान्यता प्रदान करें तथा बालकों की शोषण से रक्षा के कर्तव्य को अपने-अपने क्षेत्र की कार्य प्रणाली में जहाँ तक हो सके। शामिल करने का प्रयास किया गया है।

अतः अपने इस नैतिक कर्तव्य का अनुपालन करते हुए युनेस्को ने बच्चों के शैक्षणिक वैज्ञानिक और सांस्कृतिक देखभाल की बीड़ा उठाया। समुचित शिक्षा के अभाव को बालश्रम का मूलभूत कारक तत्व मानते हुए युनेस्को ने बच्चों के बारे में सबसे ज्यादा जोर शिक्षा पर इसके प्रयत्नों में सम्मिलित है। राज्यों को राष्ट्रीय साक्षरता कार्यक्रमों और बड़े पैमानों पर साक्षरता कार्यक्रमों और बड़े पैमानों पर साक्षरता मार्गदर्शक कार्यक्रमों के विकास के लिए सहायता प्रदान करना ऐसी सहायता वह संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम के द्वारा उपब्ध कराए गए कोषों से करता है। युनेस्को की सहायता शैक्षणिक कार्यक्रमों अध्यापकों के लिए प्रशिक्षण कम खर्च वाले विधालयों के निर्माण, पाठ्यक्रमों का आधुनिकीकरण और उच्च स्तर की पाठ्यपुस्तकों को तैयार करने आदि के लिए दिया जाता है।

विश्व व्यापार संगठन विश्व व्यापार को नियमित करने के उद्देश्य से विश्व व्यापार संगठन की स्थापना 1 जनवरी 1995 को की गई है। इसका मुख्यालय जेनेवा शहर में है। यह संस्था विभिन्न परिषदों और समितियों के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार सम्बन्धों से जुड़े उन 28 समझौतों को लागू करता है। जिसे उरुग्वे की वार्ता में शामिल किया गया था और 1919 में मोरक्को के मरकिंश में पारित किया गया था। साथ ही यह संगठन अनेक बहुपक्षीय समझौते को और भी लागू कराता है।

विश्व व्यापार संगठन इस बात को स्वीकार करता है। कि अन्तर्राष्ट्रीय बाजार के सभी व्यापारिक सहभागियों द्वारा श्रम तथा पर्यावरण मानकों को अंगीकार किया जाना चाहिए। श्रम के मान्यता प्राप्त मानकों में बालश्रम को कभी अंगीकार नहीं किया जा सकता। इस सम्बन्ध में विश्व व्यापार संगठन ने यह धमकी दी है कि श्रम के मानकों का पालन न होने की स्थिति में विकसित व विकासशील देशों में होने वाले परस्पर आयात-निर्यात पर लगाए जा सकते हैं। जो श्रम मानकों का पालन न करने वाले देशों के लिए महंगे पड़े।

ह्यूमन राइट्स एण्ड एनर्सगान अधिकारों की सार्वभौमिक शोषण की वी वर्षगीत के उपाय में प्रकाशित संपूजा राष्ट्र संघ के द्वारा प्रकाशित संस्करण 1963 के प्रष्टसंख्या 40 यद्यपि विश्व भर में विभिन्न स्वरूपों में बालश्रम की मौजूदगी के कारण सभी पर एक ही तरह का सख्त मानक थोपना किसी देश विशेष के प्रति अभ्यास कारक भी हो सकता है। वहाँ किसी के प्रति अत्यन्त ही लाभकारी थी। ऐसा भी हो सकता है कि यदि विकासशील देशों का महंगे श्रम मानकों का पालन करने के लिए मजबूर किया जाए तो ऐसा करना उनकी अर्थव्यवस्था के लिए नुकसानदेह हो जाएगा।

दिसम्बर 1999 में सिएटल (अमेरिका) में विश्व व्यापार संगठन की बैठक में 2 दिसम्बर 19199 को संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति बिल-क्लिंटन ने उस अन्तर्राष्ट्रीय सन्धि पर हस्ताक्षर कर दिया जिसके अर्न्तगत बालश्रम पर प्रतिबन्ध लगाने की बात निहित है। इस प्रकार इस सन्धि पर हस्ताक्षर करने वाले

नोरे मनव्वर, डॉ. आतेका बानो

विकसित देशों के वे प्रथम राष्ट्राध्यक्ष बन गए। अब आवश्यकता है कि अन्य राष्ट्रों द्वारा दृढ़ संकल्प के साथ इसका अनुगमन किया जाए।

मुक्त श्रमिक संघों का अन्तर्राष्ट्रीय परिसंघ

इस परिसंघ की प्रथम रूप से लंदन में दिसम्बर 1949 को हुई थी। इसका संविधान संयुक्त राष्ट्र तथा विश्व श्रमिक संघ के साथ सहयोग करना है। यह संघ श्रम करने वाले लोगों के हितों के लिए तथा उनकी पहचान स्थापित करने के लिए कार्यरत है। यह परिसंघ विश्व के 145 देशों के 215 देशों राष्ट्रीय श्रमिक संघ के लगभग 125 करोड़ श्रमिकों का प्रतिनिधित्व करता है। इसका मुख्यालय ब्रुसेल्स बेल्जियम में ही श्रमिकों संघों का विश्व महासभा इसकी स्थापना 1945 में लन्दन एवं पेरिस में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक संघ सम्मेलन द्वारा की गई थी। यह श्रम संघों के हितों को देखता है। तथा इस सम्बन्ध में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर निर्णय लेता है। इसकी उपस्थिति विश्व में 130 देशों में ही महासंघ का मुख्यालय प्राण (चेक गणराज्य) में है।

यूरोपीय श्रमिक संघ परिसंघ

इसकी स्थापना सन् 1973 में हुई थी। इसे यूरोपीय संघ तथा इफटा की मान्यता हासिल है। यह यूरोप में एकमात्र अन्तर क्षेत्रीय श्रमिक संगठन है। इसके पास 34 यूरोपीय देशों तथा 12 यूरोपीय उद्योगों संघों के 68 राष्ट्रीय श्रमिक संघों की सदस्यता है। यह यूरोप में श्रमिकों के हितों में कार्य करने वाला संगठन है। इसका मुख्यालय ब्रुसेल्स में ही संचार एजेन्सी व संसाधनों की भूमिका उक्त सहयोगी संस्थाओं के अतिरिक्त विश्वभर में अनेकों ऐसी संचार एजेन्सियों सूचना प्रौद्योगिकी और जनसंचार आदि माध्यमों से सामाजिक जागरूक विकसित करने की दिशा में सतत प्रयत्नशील है। इसमें मुख्य रूप से ही बी.ओ.ई.एस.एवं सी.आर.आई.एन. डी.ए.डब्लू.इत्यादि।

बी.ओ.ई.एस.यह बच्चों के अधिकारों के प्रचार कार्य में संलग्न एक गैर-लाभार्थी संस्था है। यह अपने संचार-तंत्र के जरिए बाल अधिकार अभिसमय के सम्पूर्ण मूल-पाठ को विभिन्न भाषाओं में उपलब्ध करा रही है।

बालश्रम उन्मूलन में अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों के द्वारा किये गये प्रयास बालश्रम की विभीषिका ने अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर इस चर्चा को काफी महत्वपूर्ण बना दिया है। यद्यपि कि अभी भी इस दिशा में कोई एक विश्वमत कायम करना बाकी ही जो कि ओस्लो सम्मेलन के परिणाम से स्पष्ट हो जाता है कई सरकारों को ऐसा मानना है कि गैर-सरकारी संगठनों कुछ हद तक अवश्य प्रभाव पड़ेगा। पश्चिमी तथा व्यापारिक संघों पर भी इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की सम्भावना है। इन व्यवधानों के बावजूद यदि ओस्लो सम्मेलनों में बालश्रम एजेंडा सामने लाया जा सकता है। तो सिर्फ इसलिए कि इस दिशा में नार्वे की सरकार ने पुरी सुरक्षा प्रदान करने की बात कही तथा भारत सरकार ने इस हेतु कई देशों को राजी कराने में महत्वपूर्ण सफलता पाई।

बालश्रम समस्या के विश्वव्यापी विस्तारात्मक आयाम को रोकने और समस्या के उन्मूलन के लक्ष्य को केन्द्रीभूत कर विश्व मंच पर काफी चर्चाएँ और सम्मेलन हुए जिन्हें निरर्थक नहीं तो बहुत सार्थक भी नहीं कहा जा सकता। विश्व के तथाकथित विकसित और विकासशील लगभग प्रत्येक राष्ट्र में यह समस्या व्याप्त है किन्तु समस्या के विरुद्ध पहल के मुद्दे पर अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर एकमत का अभाव सदैव बना ही रहता है मूल

कारण जो भी रहो हो। किन्तु इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि एकमत के अभाव के कारणों में राष्ट्रों का अपना व्यक्तिगत स्वार्थ ही बीच में आता है। कई देश इसे समाप्त करने की बात तो करते हैं। लेकिन इस हेतु समय-सीमा के निर्धारण पर वे मौन धारण कर लेते हैं। जो निश्चय ही उनके आशय को सन्देह के घेरे में लाता है। विगत दो दशकों के अनेकों प्रयास के बाद में मात्र यह परिवर्तन आया है। कि सम्पूर्ण विश्व के जनमत के द्वारा बालश्रम को एक बुराई तथा अमानवीय प्रथा के रूप में स्वीकार किया अन्यथा आज से लगभग डेढ़-दो दशक पूर्व तक इसे एक अमानवीय कुरीती के नाते शायद ही कोसा जाता था। अनवरत असफलता के बावजूद अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में बालश्रम का मुद्दा कभी फीका नहीं पड़ा। क्योंकि बालश्रम की समस्या को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए प्रयासरत अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में एम्सटर्डम सम्मेलन फरवरी 2001 में ओसियो सम्मेलन अक्टूबर 2002 तथा स्टॉकहोम सम्मेलन अगस्त 2003 हुआ है। ये सम्मेलन बालश्रम उन्मूलन हेतु विश्व जनमत तैयार करने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर रहे हैं।

बालश्रम के सतत उन्मूलन पर चतुर्थ वैश्व सम्मेलन ब्यूनस आयर्स 14-16 नवम्बर 2017 बालश्रम के सतत उन्मूलन पर चौथा वैश्व सम्मेलन अर्जेटीना सरकार के आयोजित किया गया और जिसे 14-16 नम्बर 2017 को ब्यूनस आयर्स में आयोजित किया जाएगा। इस प्रकार बालश्रम के सभी रूपों के खिलाफ या बालश्रम के सम्पूर्ण उन्मूलन के वैश्व स्तर पर महत्वपूर्ण प्रगति हुई और सन् 1997 से विश्व भर के देशों ने अपनी राष्ट्रीय नीतियों के माध्यम से विश्व के विभिन्न देशों के शहरों जैसे ओरलों में बालश्रम को सम्पूर्ण उन्मूलन के लिए अपने देश के राष्ट्रीय विधि में बनाने के लिए प्रतिबद्ध हैं जबकि अगर बालश्रम के विश्वस्तर पर उन्मूलन की बात की जाये तो विश्व के विभिन्न संस्थाओं के द्वारा अनेक पूर्वगामी प्रयास किये गये हैं। जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के द्वारा सन् 2000 से 2012 तक समय-समय पर बालश्रम के उन्मूलन के चाणक्य सिविल सर्विसेज दुरी 2004 के पृष्ठ 34 एकीकृत रणनीति व समितियों बनाई गयी जो कि अपनी सिफारिश भेजता रहता है। तथा वर्ष 2030 तक एजेंडा के सतत विकास लक्ष्यों के तहत संयुक्त राष्ट्र के सदस्य राज्यों नियोक्ताओं और श्रमिकों के संगठनों साथ ही नागरिकों एवं समाज संगठनों से 2025 तक बालश्रम को खत्म करने और मजबूर श्रम आधुनिक दासता और मानव तस्करी को खत्म करने का आग्रह किया गया है।

बालश्रम उन्मूलन हेतु संयुक्त राष्ट्र संघ के सतत प्रयास मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा जिसे संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा ने 10 दिसम्बर 1948 को अंगीकृत किया गया है यह एक प्रकार से बच्चों के संरक्षण के लिए कतिपय उपाय अंगीकृत किये। इसमें सभी देशों और सभी लोगों के लिए उपलब्धि के एक सामान्य मानक के रूप में अंगीकार किया गया इसमें यह स्पष्ट किया गया कि संयुक्त राष्ट्र संघ के सभी सदस्य देशों का यह दायित्व है कि वे बच्चों की सुविधा सहायता तथा विशेष सुरक्षा का प्रबन्ध करें। यह प्रावधान कही न कही प्रत्येक देश को इस घोषणा में सन्निहित सभी अधिकारों और स्वतन्त्रताओं को प्राप्त करने का हक देता है। और इस सम्बन्ध में जाति वर्ण लिंग भाषा धर्म राजनैतिक या अन्य विचार - प्रणाली किसी देश या समाज या राज्य विशेष में जन्म सम्पत्ति या किसी प्रकार की अन्य मर्यादा आदि के कारण भेदभाव का विचार नहीं किया जाएगा।

इस प्रकार संयुक्त राष्ट्र संघ ने अपने सुधारात्मक और संरक्षणात्मक उपायों को और भी गतिशील बनाते

नोरे मनव्वर, डॉ. आतेका बानो

हुए 1959 में संयुक्त राष्ट्र संघ ने एक बड़ी महत्वपूर्ण पहल की तथा 20 नवम्बर 1959 को बच्चों के अधिकारों की घोषणा को अंगीकार किया तथा संयुक्त राष्ट्र संघ की यह एक सार्थक पहल सम्पूर्ण विश्व को मानव समुदाय के लिये एक प्रकार से मील का पत्थर साबित हुई। 20 नवम्बर 1959 को संयुक्त राष्ट्र संघ ने सर्वसम्मति से बच्चों के अधिकारों से सम्बन्धित प्रस्ताव को स्वीकार किया गया तथा संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा ने मानव के मूल अधिकारों एवं व्यक्ति विशेष की गरिमा एवं महत्व के प्रति अपने विश्वास को पुनः दुहराते हुए निर्णय संख्या 14 के आधार पर सभी के लिए सामाजिक प्रगति तथा समुचित स्वतन्त्रता का मौलिक अधिकार प्रदान किया गया तथा साथ ही साथ मानवाधिकार के सार्वभौमिक घोषणा में जाति, लिंग भाषा, धर्म राजनीति के आधार पर विभेद न करने सम्बन्धी जन्मसिद्ध मौलिक अधिकार सभी को प्रदान किया गया।

इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि बच्चों को शारीरिक और मानसिक सुरक्षा सम्बन्धी अधिकार प्रदान किए गए। अतः संयुक्त राष्ट्र संघ का यह प्रस्ताव यह कहता है कि एक बच्चा अपने शारीरिक कारणों तथा मानसिक रूप से परिपक्व न होने के कारण विशेष सुरक्षा तथा देखभाल की अपेक्षा रखता है। अतः उसे जन्म से पहले तथा बाद में भी विशेष कानूनी संरक्षण मिलना चाहिए समस्त मानव समुदाय का यह कर्तव्य है कि उन बच्चों को अधिकार देना जो जीवन जीने के और समाज में स्वतन्त्रता के अधिकार का उत्तरदायित्व माता-पिता तथा परिवार के अन्य स्त्री तथा अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों एवं क्षेत्रीय संगठन राष्ट्रीय सरकारों को दिया गया ताकि साथ ही बच्चों के सम्बन्ध में सम्बन्धित कानून बनाने के अधिकार भी दिए गए। बच्चों के अधिकार सम्बन्धी संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्घोषणा प्रपत्र में 10 मार्गदर्शक सिद्धान्त अर्न्तविष्ट किए गए तथा माता-पिता से यह अपेक्षा रखता है। वे इन दस सिद्धान्तों की अनुपालन सुनिश्चित करने हेतु उचित कदम उठाये।

संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्घोषणा प्रपत्र में अर्न्तविष्ट किए गए 10 मार्गदर्शक सिद्धान्त निम्नलिखित हैं।

- (1) प्रत्येक बच्चे को बिना किसी आपत्ति के अपने सभी अधिकारों का लाभ मिले।
- (2) बच्चों को विशेष संरक्षण प्राप्त हो। उन्हें कानूनों एवं अन्य साधनों से आगे बढ़ने के अवसर तथा सुविधाएँ मिले जिसमें उनका शारीरिक, मानसिक व नैतिक व आध्यात्मिक एवं सामाजिक विकास स्वस्थ तथा सामान्य रूप से स्वतन्त्रता एवं गरिमा के साथ हो सकें।
- (3) बच्चे को जन्म से ही उसका एक नाम तथा राष्ट्रीयता प्राप्त हो जानी चाहिए।
- (4) बच्चे को सामाजिक सुरक्षा का लाभ मिलना चाहिए। उसकी माँ एवं उसकी विशेष सुरक्षा एवं देखभाल हो जिसमें प्रसव से पूर्व एवं प्रसव के बाद की देखभाल भी सम्मिलित है बच्चे को उचित पोषण आहार, आवास मनोरंजन एवं स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धि उपयुक्त मात्रा में इसका भी उसे भी अधिकार होगा।
- (5) जो बच्चा शारीरिक मानसिक या सामाजिक रूप से विकलांग या अशक्त है। उसे उसकी स्थिति के अनुरूप विशेष चिकित्सा शिक्षा एवं देखभाल की आवश्यकता होगी जो उसे प्रदान की जानी चाहिए।
- (6) बच्चा प्यार एवं अपनापन चाहता है उसे जब कभी एवं जहाँ कहीं भी बड़ होना है तो उसके माता-पिता अपना उत्तरदायित्व पुरे तरह से निभाते हुए उसकी देखभाल करें। उसे वहाँ अपनेपन, चारित्रिक विकास शारीरिक एवं भौतिक सुरक्षा का वातावरण उपलब्ध होना चाहिए।
- (7) बच्चे को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है। जो कि निःशुल्क एवं उसके लिए आवश्यक है। विशेषकर

शुरू की स्थिति में। उसे समानता के आधार पर शिक्षा प्राप्त करने का बराबरी का अवसर प्राप्त होना चाहिए। ताकि इसकी योग्यता उसमें स्वयं निर्णय लेने की क्षमता तथा उसमें चारित्रिक व नैतिक एवं सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना विकसित हो सके। जो उसे समाज का उपयोगी सदस्य उत्तरदायित्व की भावना विकसित हो सके। जो उसे समाज का उपयोगी सदस्य बनाने में सहयोग दे सकें।

(8) सुरक्षा एवं मदद की स्थिति में बच्चा पहला अधिकार रखता है चाहे कैसी भी परिस्थिति हो।

(9) बच्चे को हर प्रकार की कुरता एवं शोषण से सुरक्षा प्रदान की जानी चाहिए। उसे किसी भी रूप में अवैध कार्यों हेतु प्रयोग नहीं करना चाहिए।

(10) ऐसे सभी व्यवहारों से बच्चों को सुरक्षा प्रदान की जाए जो जाति, धर्म या किसी अन्य रूप से बच्चों में उसके प्रति भेदभाव की भावना उत्पन्न करते हुए हो। उसका विकास इस प्रकार से एवं इन भावनाओं के अन्तर्गत किया जाए। जिससे उसके सूझ-बुझ सहन-शक्ति, मातृ प्रेम एवं पूर्ण सहमति के गुण आ सके। ताकि उसके अन्दर छिपी शक्ति एवं गुणों को मानव सेवा हेतु काम में लिया जा सके।

इस प्रकार संयुक्त राष्ट्र संघ के बाल हितों एवं मानवाधिकार सम्बन्धी उक्त प्रावधान एक नए दृष्टिकोण को परिलक्षित करते हैं। और द्वितीय विश्व युद्ध के पूर्व और इसके दौरान के अनुभवों का उल्लंघन उन शासकों के द्वारा हुआ जिन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा को चुनौती दी। यद्यपि इन घोषणाओं को तब इस रूप में नहीं देखा गया कि वे सदस्य राज्यों पर विधिक दायित्व अधिरोपित करेगी। किन्तु आज यह माना जाता है। कि घोषणा ने प्रथागत विधि का बल प्राप्त कर लिया है। अतः यह उन राज्यों पर भी बाध्यकारी हो गया है जो संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य नहीं हैं। उक्त समझौते अन्तर्राष्ट्रीय विधि का स्वरूप बन गया और विश्व के 30 राष्ट्रों ने उसका अनुमोदन किया।

बच्चों के अधिकारों से सम्बन्धित संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 20 नवम्बर 1989 को पारित कन्वेंशन इस समझौते में शामिल देश यह मानते हैं संयुक्त राष्ट्र घोषणा पत्र के सिद्धान्तों के अनुसार समुचे मानव समुदाय की अंतर्निहित गरिमा और सभी के समान अधिकारों की यह मान्यता ही विश्व में स्वाधीनता न्याय और शान्ति का आधार है।

इस प्रकार संयुक्त राष्ट्र घोषणापत्र को मानने वाले राष्ट्रों ने मूलभूत मानव अधिकारों और मानवीय गरिमा तथा सम्मान के प्रति आस्था व्यक्त की ही तथा व्यापक स्वाधीनता के वातावरण में सामाजिक प्रगति और जीवन के बेहतर मानकों को बढ़ावा देने को संकल्प व्यक्त किया है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने मानव अधिकारों की विश्वव्यापी घोषणा तथा मानव अधिकार की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा में यह घोषणा की गई है कि हर व्यक्ति को जाति वर्ण लिंग, भाषा, धर्म, राजनीति अथवा अन्य राय, राष्ट्रीय अथवा सामाजिक उद्भव, सम्पत्ति, जन्म या हैसियत जैसे किसी भी भेदभाव के बिना इस घोषणा और प्रसंविदा में प्रदत्त अधिकार और स्वाधीनता प्राप्त है। मानव अधिकारों की विश्वव्यापी घोषणा के अन्तर्गत संयुक्त राष्ट्र ने यह कहा कि बचपन को विशेष ध्यान और सहायता की आवश्यकता है। तथा परिवार समाज का मूलभूत समूह है। और सभी सदस्यों को बच्चों के विकास और खुशहाली के लिए इसे आवश्यक संरक्षण और सहायता मिलनी चाहिए ताकि वह समाज में अपना दायित्व पूर्ण रूप से निभा सके। और बच्चे को यह समझते हुए कि बच्चों को समाज में अपने विशिष्ट व्यक्तिगत

नोरे मनव्वर, डॉ. आतेका बानो

रूप से जीने के लिए तैयार किया जाना चाहिए और उसका पालन-पोषण संयुक्त राष्ट्र घोषणा पत्र के आदर्शों एवं खासतौर से शान्ति गारिमा सहिष्णुता, स्वाधीनता समता और परस्पर एकता की भावना के अनुरूप होना चाहिए

1 हम्फी जान पीट्र डीट्र युनिवर्सल डिक्लरेशन आफ ह्यूमन राइट्स इम्पैक्ट एंड जेडिसियल कैरक्टर रामचन्द्रन बी जी सम्पादित ह्यूमन राइट्स

इर्जस आफ पुनिवर्सल डिक्लरेशन (19790) संस्करण पृष्ठ संख्या 67 महावीर जैन बालश्रम विकास का मुद्दा प्रथम संस्करण 2010 के पृष्ठ संख्या 373 बाल अधिकारों की घोषणा यह कहा गया कि शारिरिक तथा मानसिक रूप से अपरिपक्व होने के कारण आवश्यकता है। इसमें जन्म से पूर्व तथा उसके बाद बच्चों को सुरक्षा के विशेष उपायों और देखभाल की भी समुचित कानूनी संरक्षण शामिल है।

निष्कर्ष

इस प्रकार निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है। कि अन्तर्राष्ट्रीय कानून के ढाँचे के रूप में जो कि बाल अधिकारों के मुद्दों को मानव की मूलभूत अधिकारों की परिधी के अर्न्तगत इसे लाना एक प्रकार से बाल अधिकारों के विकास में एक सार्थक पहल है। इस परिप्रेक्ष्य में एक बात यह निकलकर सामने आती है कि बच्चों को कैसे एक व्यक्ति के रूप में समाज में स्थान मिले और उन्हें कैसे सामाजिक न्याय की परिधी के भीतर बाल अधिकारों के लिए क्या किया जाय ताकि सम्पूर्ण विश्व से बालश्रम उन्मूलन हो सके। जिससे की उनका शारीरिक व मानसिक विकास हो सकें। बालश्रम की समस्या के कारण ही बच्चा पूर्ण रूप से परिपक्व नहीं हो पाता है जिससे की उसका सम्पूर्ण सामाजिक विकास अवरूद्ध हो जाता है। विशेष रूप से उसे विशेष कानून की जरूरत पडती है जन्म से पूर्व तथा उसके बाद ताकि उसका नैसर्गिक विकास हो सकें। समस्त मानव समुदाय का यह कर्तव्य है कि उन बच्चों को सुखद जीवन जीने और समाज में स्वतन्त्रता का अधिकार उन्हें देने की जिम्मेदारी लेनी होगी जिसमें प्रमुख रूप माता-पिता परिवार, समाज व राज्य तथा राष्ट्रीय व अन्तराष्ट्रीय संगठनों के सतत प्रयासों से ही बालश्रम की समस्या का निदान हो सकेगा। जिससे कि समाजिक समस्या के रूप में इसने जो भी पहचान बनाई है उसे दूर किया जा सकता।

अतः इस प्रकार यह समझ सकते हैं। कि बालश्रम की समस्या का समाधान केवल राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों एवं घोषणा-पत्रों से ही नहीं हो सकता है बल्कि इस सामाजिक समस्या के समाधान सम्पूर्ण समाज को बौद्धिक स्तर पर प्रयास करने की आवश्यकता है इस बात से भी इन्कार नहीं कर सकते हैं कि एक उम्र के बच्चे को मजदुरी नहीं करनी चाहिए बल्कि उसकी आर्थिक विवशता से भी इन्कार नहीं किया जा सकता। लेकिन वास्तविक रूप से अन्तर्राष्ट्रीय परिपेक्ष्य पर समाज व विश्व से जब तक भुखमरी बेगारी व गरीबी आर्थिक विवशता का मानव समाज के द्वारा जब तक इसका अन्त नहीं होगा तभी बच्चों को अपना बचपन बचाने के लिए मजबूर नहीं होना पड़ेगा। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मुख्य रूप से कई संस्थाओं द्वारा बालश्रम के सम्पूर्ण उन्मूलन एवं बच्चों के सर्वांगीण विकास से सम्बन्धित अनेक प्रयास किए गए हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ

ग्लोकल दृष्टि, वर्ष 2, अंक: 3-4, सितम्बर-दिसम्बर 2025

- (क) जे.सी. कुलश्रेष्ठ चाइल्ड लेबर इन इण्डिया संस्करण 1978
- (ख) अमित बोहरा बालश्रम एवं अधिकार संस्करण 2014
- (ग) सुभाष शर्मा भारत में बाल मजदूर तृतीय संस्करण 2010
- (घ) महावीर जैन बालश्रम विकास का मुद्दा प्रथम संस्करण 2010

- (5) नरूला एवं तम्बोली बाल विधियों संस्करण 2020
- (6) डॉ. जय नारायण पाण्डेय भारत का संविधान संस्करण 2019
- (7) डॉ. निशा जैन असंगठित क्षेत्रों में बाल मजदूर संस्करण 2021
- (8) कैलाश सत्यार्थी आजाद बचपन की ओर संस्करण 2019
- (9) रवि प्रकाश यादव बालश्रम समस्या एवं समाधान संस्करण 2012
- (10) डॉ. शिव शंकर सिंह बच्चों के विरुद्ध अपराध एवं किशोर अपराध संस्करण 2018
- (11) डॉ. बसन्ती लाल बाबेल महिला एवं बाल कानून संस्करण 2017
- (12) डॉ. एस. के. कपूर मानव अधिकार एवं अन्तर्राष्ट्रीय विधि संस्करण 2016
- (13) डॉ. टी. पी. त्रिपाठी मानव अधिकार एक परिचय संस्करण 2017

आधुनिकता एवं पराधीनता की कसौटी माद्री कोहली कृत महासमर के संदर्भ में

मृत्युंजय कुमार

सारांश- जीवन रुपी वरूथी के दो चक्र हैं- नर एवं नारी। एक के बिना दूसरे की कल्पना नहीं की जा सकती है। इन दोनों के संयोग से सृष्टि का सृजन होता है। भारतीय समाज में स्त्री को त्याग की प्रतिमूर्ति माना गया है। जिसका संपूर्ण जीवन दूसरों की सेवा में व्यतीत होता है बदले में सभी स्त्री को उचित परितोष नहीं मिलता। साहित्य समाज का प्रतिबिंब है। समाज में जो भी घटित होता है, वह साहित्य का अंग बन जाता है। पौराणिक पात्रों के विषय में भी बहुत कुछ पढ़ने को मिलता है। नरेंद्र कोहली ने स्त्री मन की लघुता तथा विशालता को कालातीत बनाकर जिंदगी को संपूर्णता में ढालने का सराहनीय प्रयत्न किया है। आधुनिक समय में व्याप्त स्त्री- उचित चिंतन को तार्किक पात्रों के द्वारा साहित्य के धरातल पर उतारने का प्रयास किया है। समाज में स्त्रियों के प्रति, सर्वव्यापी पूर्वाग्रहों से स्त्री के खिलाफ, पुरुषों की रूढ़िवादी मान्यताओं से उत्पन्न त्रुटियों तथा उनके निदान के दृष्टिकोण से कोहली जी के स्त्री-विषयक उपन्यास बहुत ही विशिष्ट है। कोहली कृत महासमर में माद्री की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। माद्री की संक्षिप्त भूमिका में आधुनिक स्त्री की झलक मिलती है। स्त्री जीवन के प्रत्येक पक्षों में उसका जीवन आदर्शमय है। उसमें निर्भीकता, साहस, सुंदरता का बेजोड़ संगम है। कोहली जी ने माद्री के चरित्र के द्वारा विभिन्न स्त्री-विषयक अवधारणाओं का विश्लेषण किया है। प्रस्तुत शोध-पत्र में माद्री के चरित्र को आधुनिक दृष्टिकोण से देखने का सुंदर एवं सार्थक प्रयास किया गया है।

बीज शब्द- माद्री, दहेज, आधुनिक, अस्मिता, स्वयंवर, रूढ़िवाद, आदर्श, मर्यादा।

प्रस्तावना- भारतीय समाज में स्त्री को तिरिया, दयिरा, भार्या, अर्धांगिनी, वामा, कलत्र, कांता, जाया, सहधर्मिणी, वामांग, श्रीमती, प्राण, वल्लभा जैसे न जाने कितने उपमाओं से विभूषित किया जाता है, किंतु मौका मिलते ही उसका अपमान भी किया जाता है। प्राचीन काल में स्त्री को बड़ा ही गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त था। समय-परिवर्तन के साथ उसकी स्थिति में भी परिवर्तन आया। प्राचीन काल में स्त्री को अधिकार के साथ बंदीशें भी थी। वह पति की इच्छा के विरुद्ध नहीं जा सकती थी। किंतु आधुनिक युग में स्त्री पति को मार कर ड्रम में भर दे रही है या टूर के बहाने संयोजित तरीके से पति की हत्या कर दे रही है। आधुनिकता की परिभाषा यह नहीं है कि वह अपने स्वार्थ, प्रेम हेतु किसी की हत्या कर दे। नरेंद्र कोहली ने महासमर में पीड़ित, स्त्री जीवन के विभिन्न पक्षों का बड़ी सहजता एवं कुशलता एवं संवेदनशीलता के साथ चित्रण किया है।

मूल आलेख- महासमर में कई स्त्री पात्र ऐसी हैं, जो आधुनिकता से परिपूर्ण हैं, वह जीती अपनी शर्त पर हैं, परंतु मर्यादा के भीतर। वह अपने स्वाभिमान से समझौता नहीं करती हैं। महासमर में कई स्त्री पात्र हैं जिनका

जीवन आदर्शमय है। एक ऐसी ही स्त्री पात्र माद्री हैं जो कि मद्र देश के राजा की पुत्री तथा शल्य की बहन है। उसका सौन्दर्य अद्वितीय था। माद्री का विवाह उसकी इच्छा के विरुद्ध पांडु से हुआ था। नरेंद्र कोहली कृत महा समर में माद्री आधुनिकता से परिपूर्ण स्त्री के रूप में अभिव्यक्त हुई है। उसमें स्त्री अस्मिता, अधिकारों, गरिमा को लेकर स्वयं अपने विचार है। वह किसी भी मामले में अपने अधिकारों का अतिक्रमण होने नहीं देना चाहती है। माद्री का विवाह दहेज देकर नहीं बल्कि दहेज लेकर कुरु राजकुमार पांडु के साथ हुआ था जो उस युग में सर्वथा अनोखा था। माद्री सपत्नी प्रथा के विरुद्ध थी। यदि कुरु वंश शक्तिशाली न होता तो माद्री विवाह से इंकार कर देती। जब कुंती उससे पूछती है तुम्हें मेरे विषय में ज्ञात नहीं था, तब माद्री कहती है- "मुझे से स्वीकृति मांगी ही किसने मैंने स्वयंवर में वरण नहीं किया है उनका। मुझे तो भैया ने सौंप दिया पितृव्य भीष्म को।"1 माद्री में स्पष्टवादी मुखर है। वह अंदर-अंदर घुट-घुट कर जीने की अपेक्षा भीतर की बात कह देती है। वह बोझिल मन लेकर जीना पसंद नहीं करती है। वह कुंती से पति पांडु के विषय में कहती है, "दिग्विजय के एक लंबे अंतराल के पश्चात फिर परसों आए थे वे मेरे पास। वैसे ही पिछली बार के समान उत्तेजित कर बीच में सब छोड़कर भाग गए।"2 माद्री अपने पति के कर्तव्यों को स्मरण कराती रहती है।

एक नव विवाहिता के मन में क्या चल रहा है वह अपने पति से क्या चाहती है यह तथ्य प्रत्येक पुरुष जानता है। कोई भी नवविवाहिता अपने पति को इसका बोध नहीं कराती है किन्तु माद्री पाण्डु द्वारा काम-क्रीड़ा छोड़कर मृगया हेतु भाग जाना अच्छा नहीं लगता। वह पांडु से बड़े बेबाक शब्दों में कहती है-"बार-बार हमें अपने क्षत्रियत्व और वीरता का झांसा मत दो। अपने पौरुष की बात करो। कब तक इस प्रकार हस्तिनापुर से भागते रहोगे।"3 आधुनिक स्त्री के समान वह भी अपने पति से कंधा से कंधा मिलाकर चलना चाहती है। वह अपने पति के साथ आखेट हेतु वन में जाना चाहती है। पांडु सुंदर स्त्री को आखेट हेतु उचित नहीं मानता है। माद्री इसका प्रतिवाद करती है, "सुंदरियों को शयन कक्ष में काम-उत्तेजना में छोड़ भाग जाने का अद्भुत कर्म आप करते हैं।"4 माद्री कन्या-शुल्क के भी खिलाफ है। वह कन्या शुल्क को लड़की बेचने के समान समझती है। कन्या-शुल्क के कारण वह अपने आप को हीन समझती है, किंतु कुंती को उसके कर्तव्य का ज्ञान कराती है, "कैसी नारी हो तुम! मेरे भाई ने तो शुल्क लेकर मेरा दान कर दिया है। मैं स्वतंत्र नहीं हूँ। किंतु तुमने तो स्वयंवर में उसका वरण किया है। अपने साथ यौतुक लेकर आयी हो। तुम उनसे डरती क्यों हो?"5

माद्री अपनी अवहेलना होते नहीं देख सकती। वह पांडु की प्रत्येक प्रश्न का निर्भीकता से जवाब देती है। यहाँ तक की पांडु के प्रति अशोभनीय बातें भी कहती है, "यह हमारा अपमान करने के लिए साथ लाया है।"6 वह अपने अधिकार हेतु सजग है। वह अपने अधिकार प्राप्त करने हेतु धमकाती भी है। वह कहती है, "मैं जीवित रहूंगी तो अपने ढंग से अन्यथा जीवन को समाप्त कर दूंगी।"7 माद्री विवाह रुपी संस्था को स्त्री पतन का कारण मानती है। इसलिए वह उस विवाह को मानने की पक्षधर नहीं है, जिसमें पति खरा नहीं उतरता है। माद्री के शब्दों में- "हमारे विवाह की धर्म-सम्मत अपेक्षाओं पर पाण्डु पूरा नहीं उतरता इसीलिए मैं इस विवाह को धर्म-सम्मत नहीं मानती।"8 माद्री उसी विवाह को मानती है जिसमें पति-पत्नी एक दूसरे के पूरक हों। एक-दूसरे के सुख-दुख को समझे। एक-दूसरे की भावनाओं की कद्र करें। वह अपने पति से रति सुख की कामना करती है। माद्री के शब्दों में, "मैं तपस्विनी का जीवन नहीं जीना चाहती। मैं रति सुख-विहीन गृहस्थ जीवन की इच्छुक नहीं हूँ।"9

मृत्युंजय कुमार

प्राचीन काल में पति द्वारा पत्नी को त्यागना साधारण बात थी, परंतु जब एक पत्नी अपने पति को त्यागने के लिए कह रही है, तो अपने आप में असाधारण है। माद्री भी अपने पति का त्याग करने की सोचती है। "उसने अभी हमें खड़े-खड़े ही त्याग नहीं दिया था। पुरुष जो चाहे कर सकता है। स्त्री को एक पुंसत्वहीन पति को त्यागने का भी अधिकार नहीं है।" 10 माद्री एक स्त्री को केवल जड़ पदार्थ मानने से इंकार करती है। यह तथ्य उसके चरित्र से झलकता है। "यह कहां का न्याय है कि पुरुष चाहे तो नारी का सत्कार करें चाहे तो तिरस्कार। नारी को सब कुछ वैसा ही स्वीकार करना होगा, जैसी पुरुष की इच्छा है। जैसे नारी का अपना कोई अस्तित्व ही न हो, इच्छा न हो विचार न हो। नारी मनुष्य नहीं है क्या जड़ पदार्थ है?" 11 माद्री स्त्री को पुरुष की सम्पत्ति मानने से इंकार करती है। वह कहती है, "नारी को पशु के समान बेचना या बंदी बनाना कभी भी न्याय नहीं माना जा सकता। वह पुरुष की सम्पत्ति नहीं है।" 12 वर्तमान युग में भी बहुतेरे ऐसे पति मिल जाएंगे जो पत्नी को घास-फूस पाषाण इत्यादि समझते हैं। किंतु आजकल की स्त्री जागरुक एवं अपने अधिकारों के प्रति सजग है। वह माद्री की भांति अपने पति को छोड़कर अन्य पुरुष से विवाह कर लेने का संकल्प ले लेती है।

जब पांडु माद्री की तरफ ध्यान नहीं देते तो वह अन्य पुरुष से विवाह करने को सोचती है, "मैं किसी अन्य पुरुष से विवाह कर लूंगी।" 13 माद्री एक महत्वाकांक्षी स्त्री है वर्तमान युग की माता की तरह वह भी अपने पुत्रों की शिक्षा-दीक्षा को लेकर चिंतित है। जिस प्रकार आधुनिक माताएं अपनी संतान की अच्छी शिक्षा-दीक्षा हेतु लालायित रहती हैं। अच्छे विद्यालय में अपनी संतान को शिक्षा हेतु भेजती हैं, ठीक उसी प्रकार माद्री भी चाहती है कि उसकी संतान उच्च शिक्षा प्राप्त करें। वह केवल आश्रम की शिक्षा को ही पर्याप्त नहीं मानती, बल्कि वह आश्रम की शिक्षा के साथ महल की शिक्षा भी अपने संतान को देना चाहती है। उसकी संतान गुरुकुल की शिक्षा के साथ महल की शिक्षा को भी प्राप्त करें। वह पांडु कहती है, "यहाँ पलकर बच्चा एक साधारण आश्रमवासी, वनवासी या ग्राम वासी ही बन पायेगा। मयूरों के मध्य पलकर गरुण भी पेड़ की ऊंचाई तक ही उड़ पायेगा। यहां रहेंगे, तो आपके पुत्र भी दो धोतियों, एक यज्ञोपवीत और एक कुटीर में ही प्रसन्न हो जाएंगे। उन्हें वन के वृक्षों के फल और कंदमूल सबसे स्वादिष्ट भोजन लगेंगे। वे या तो नारी के श्रृंगार को समझ नहीं पाएंगे, या पुष्पों के श्रृंगार को ही प्रसाधन की सीमा मान लेंगे।" 14 इस प्रकार माद्री उस शिक्षा को उत्तम मानती हैं, जिनसे बच्चों का सर्वांगीण विकास हो। माद्री में श्रृंगार के प्रति लगाव भी बहुत ज्यादा है। वह श्रृंगार के प्रत्येक अवसर को व्यर्थ जाने नहीं देती। एक स्त्री उस समय परम आनंदित होती है जब उसे मां का सुख मिले। माद्री की भी मां बनने की प्रबल उत्कंठा है। वह पांडु से कहती है, "अनुमति हो तो कहूंगी कि चाहिए मुझे भी रति सुख भी किंतु व्यभिचार नहीं चाहती। अतः इन परिस्थितियों में केवल मातृत्व से ही संतोष कर लूंगी। मैं देखती हूँ की मां बनकर कुंती कितनी गरिमामयी हो गयी है।" 15 सौत का नाम सुनते ही प्रत्येक स्त्री कांप जाती है। कोई स्त्री यह नहीं चाहती है कि उसका पति उसके होते अन्य स्त्री को घर ले आए। यदि दूसरी पत्नी का घर में आगमन हुआ तो कलह मचना तय है। माद्री में इस भावना का अभाव था। फिर भी उसकी वाणी से कुंती की प्रति ईर्ष्या झलक ही जाती है। वह हर तरीके से कुंती से श्रेष्ठ होना चाहती है, "मैं कुंती से अधिक कुलीन हूँ उससे अधिक सुंदर भी और व सभी मेरा उससे कम ही है।" 16 कुंती की सहायता से उसके भी दो पुत्र नकुल और सहदेव पैदा होते हैं।

पांडु की मृत्यु का कारण स्वयं को मानकर माद्री जीना नहीं चाहती, किंतु बच्चों के भविष्य को लेकर चिंतित

रहती है। वह कुंती से कहती है, "मैं जीवित रही तो बहुत संभव है कि मैं जीवन की कठोरताओं का सामना न कर पाऊँ। संभव है मैं अपनी दुर्बलताओं के आवेग को न झेल पाऊँ। संभव है मैं अपनी ममता को संतुलित न कर पाऊँ तुम्हारे पुत्रों को अपना पुत्र न मान पाऊँ। कौन्तेयों और माद्रियों में मेरी भेद दृष्टि न मिटे।" 17 वह अत्यंत चालाकी से अपने पुत्रों को कुंती को सौंप कर पति के साथ भस्म हो जाती है। सती होकर अपने पीछे बहुत से प्रश्नों को छोड़ जाती है कि माद्री जैसी स्वतंत्र विचार वाली औरत एक पुरुष से हार कर कम आयु में ही अपनी जीवन लीला समाप्त कर लेती है। यह आज भी चिन्तन का विषय है कि उसने सही किया या गलत। इस तरह हम देखते हैं कि माद्री आधुनिक गुणों से सुसज्जित होते हुए भी परंपराओं से नतमस्तक होकर अपने पति के साथ सती हो जाती है तथा पुरुष के वर्चस्व की कड़ी में एक अध्याय और जोड़ देती है।

उद्देश्य- वर्तमान परिप्रेक्ष्य में, जहाँ एक तरफ महिला को स्वाधीन मानकर उसे प्रत्येक क्षेत्र में सहभागिता देकर स्त्री-पुरुष संबंधों की नैतिकता तक पहुंचाने का प्रयास किया जाता है वहीं दूसरी ओर आज भी स्त्री को पुरुषों की अधीन, उसकी हर आज्ञा का पालन कराने हेतु विवश किया जाता है। वस्तुतः माद्री के माध्यम से कोहली जी ने आधुनिक नारी को सशक्त बनाने का प्रयास किया है जो अपनी समस्याओं से संघर्ष करते हुए परिस्थितियों से झूझती हुई प्राचीन परंपराओं एवं रूढ़ियों का तिरस्कार कर अपने स्वत्व की रक्षा हेतु तत्पर है, तथा अपने अधिकारों के लिए लड़ जाती है।

उपसंहार- महासमर में चित्रित माद्री के माध्यम से, कोहली जी ने स्त्री के उन अधिकारों की वकालत की है जिनसे स्त्री वंचित है। हमारे जीवन में एक स्त्री किन-किन रूपों में उपस्थित होती है माद्री के रूप में उनसे साक्षात्कार करवाया है। माद्री द्वारा युग में जीने वाली एक पात्र नहीं हैं, बल्कि वह आज के परिवेश की जरूरत बन गई है जहाँ एक स्त्री को केवल स्त्री बनाने का प्रयास किया जा रहा है। वस्तुतः महासमर में वर्णित स्त्री पात्र माद्री के द्वारा कोहली जी ने वर्तमान समय की चेतना से संपन्न स्त्री को वाणी प्रदान की है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

- 1 कोहली, नरेंद्र- बंधन (महासमर-1) पृष्ठ संख्या- 390
- 2 कोहली, नरेंद्र- बंधन (महासमर-1) पृष्ठ संख्या- 414
- 3 कोहली, नरेंद्र- बंधन (महासमर-1) पृष्ठ संख्या- 416
- 4 कोहली, नरेंद्र- बंधन (महासमर-1) पृष्ठ संख्या- 417
- 5 कोहली, नरेंद्र- बंधन (महासमर-1) पृष्ठ संख्या- 424
- 6 कोहली, नरेंद्र- बंधन (महासमर-1) पृष्ठ संख्या- 425
- 7 कोहली, नरेंद्र- बंधन (महासमर-1) पृष्ठ संख्या- 426
- 8 कोहली, नरेंद्र- बंधन (महासमर-1) पृष्ठ संख्या- 441-442
- 9 कोहली, नरेंद्र- बंधन (महासमर-1) पृष्ठ संख्या- 442
- 10 कोहली, नरेंद्र- बंधन (महासमर-1) पृष्ठ संख्या- 442
- 11 कोहली, नरेंद्र- बंधन (महासमर-1) पृष्ठ संख्या- 442
- 12 कोहली, नरेंद्र- बंधन (महासमर-1) पृष्ठ संख्या- 443
- 13 कोहली, नरेंद्र- बंधन (महासमर-1) पृष्ठ संख्या- 443
- 14 कोहली, नरेंद्र- बंधन (महासमर-1) पृष्ठ संख्या- 477-478
- 15 कोहली, नरेंद्र- बंधन (महासमर-1) पृष्ठ संख्या- 489
- 16 कोहली, नरेंद्र- बंधन (महासमर-1) पृष्ठ संख्या- 488
- 17 कोहली, नरेंद्र- बंधन (महासमर-1) पृष्ठ संख्या- 503

हिंदी पत्रकारिता के प्रारंभिक चरण

रीना सती, डॉ. शोभा त्रिपाठी

1. सारांश

हिंदी पत्रकारिता का इतिहास, स्वरूप और विकास भारतीय समाज, राजनीति और संस्कृति के परिवर्तनशील परिदृश्य का एक महत्वपूर्ण हिस्सा रहा है। यह केवल समाचारों के प्रसारण का माध्यम नहीं रहा, बल्कि स्वतंत्रता संग्राम से लेकर आधुनिक डिजिटल युग तक सामाजिक जागरूकता, जनमत निर्माण और लोकतंत्र की रक्षा में एक अहम भूमिका निभाता आया है। हिंदी पत्रकारिता का उद्भव 19वीं शताब्दी के मध्य में हुआ, जब हिंदी में प्रकाशित होने वाले पहले समाचार पत्र 'उदंत मार्तंड' (1826) ने भारतीय भाषाओं में पत्रकारिता की नींव रखी। हालांकि, संसाधनों और तत्कालीन शासन की उदासीनता के कारण यह पत्र अधिक समय तक नहीं चल सका, लेकिन इसके बाद कई पत्र-पत्रिकाएँ आईं, जिन्होंने हिंदी पत्रकारिता को एक नई दिशा दी। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में 'बनारस अखबार', 'संपर्क वृत्तान्त', 'भारत मित्र', 'अभ्युदय', 'सरस्वती' और 'कर्मयोगी' जैसे पत्रों ने हिंदी पत्रकारिता को विस्तार दिया और इसे समाज सुधार, शिक्षा, स्वतंत्रता आंदोलन तथा राष्ट्रीयता से जोड़ने का कार्य किया।

20वीं शताब्दी की शुरुआत हिंदी पत्रकारिता के लिए एक क्रांतिकारी दौर रहा। यह वह समय था जब भारतीय स्वतंत्रता संग्राम तेज हो रहा था और पत्रकारिता को ब्रिटिश शासन के दमन का सामना करना पड़ रहा था। इस काल में 'प्रताप', 'स्वराज्य', 'कर्मवीर', 'हिंदुस्तान' और 'आज' जैसे अखबारों ने राष्ट्रीयता और स्वाधीनता की भावना को प्रोत्साहित किया। हिंदी पत्रकारिता उस समय केवल सूचना देने का कार्य नहीं कर रही थी, बल्कि लोगों में स्वतंत्रता की चेतना जागृत करने का माध्यम भी बन गई थी। महात्मा गांधी, बाल गंगाधर तिलक, मदन मोहन मालवीय और गणेश शंकर विद्यार्थी जैसे स्वतंत्रता सेनानियों ने पत्रकारिता को अपने विचारों और आंदोलनों को जन-जन तक पहुँचाने के लिए इस्तेमाल किया। इस दौर में पत्रकारिता मिशनरी भावना से प्रेरित थी, जिसमें पत्रकारों का उद्देश्य केवल समाचार देना नहीं, बल्कि सामाजिक और राजनीतिक क्रांति को दिशा देना भी था।

हिंदी पत्रकारिता का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य: 1850 से प्रारंभिक विकास

हिंदी पत्रकारिता का इतिहास भारतीय समाज और संस्कृति की परिवर्तनशील यात्रा का एक महत्वपूर्ण हिस्सा रहा है। पत्रकारिता केवल सूचनाओं के आदान-प्रदान का माध्यम नहीं रही, बल्कि यह सामाजिक जागरूकता, राष्ट्रीय चेतना और जनमत निर्माण का भी प्रभावी साधन रही है। हिंदी पत्रकारिता का प्रारंभिक विकास 19वीं शताब्दी के मध्य से शुरू हुआ और इस यात्रा में कई महत्वपूर्ण पड़ाव आए, जिन्होंने इसके स्वरूप और प्रभाव

को गहराई से प्रभावित किया। 1850 से 20वीं शताब्दी के आरंभ तक हिंदी पत्रकारिता के स्वरूप, उद्देश्य और प्रभावों में उल्लेखनीय बदलाव देखे गए। इस अवधि में हिंदी पत्रकारिता केवल समाचारों के संकलन और प्रकाशन तक सीमित नहीं थी, बल्कि यह भारतीय समाज में चेतना जागरण, शिक्षा, सामाजिक सुधार और स्वतंत्रता संग्राम जैसे विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक बनी।

हिंदी पत्रकारिता का आरंभिक दौर कठिनाइयों और संघर्षों से भरा रहा। 30 मई 1826 को जुगल किशोर शुक्ल द्वारा प्रकाशित 'उदंत मार्तण्ड' को हिंदी पत्रकारिता का पहला समाचार पत्र माना जाता है। यह पत्र साप्ताहिक था और इसका प्रकाशन कोलकाता से किया जाता था। लेकिन हिंदी भाषी पाठकों की कम संख्या और आर्थिक कठिनाइयों के कारण इसे एक वर्ष के भीतर ही बंद करना पड़ा। इसके बाद भी, 19वीं शताब्दी के मध्य और उत्तरार्ध में हिंदी पत्रकारिता के विकास की गति धीरे-धीरे बढ़ी। इस काल में प्रकाशित होने वाले अन्य प्रमुख समाचार पत्रों में 'बनारस अखबार' (1845), 'संपर्क व्रतांत' (1850), 'भारत मित्र' (1878), 'सरस्वती' (1900), 'कर्मयोगी' और 'हिंदी प्रदीप' (1877) प्रमुख थे। इन पत्रों ने हिंदी भाषा और साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और समाज सुधार के आंदोलनों को भी प्रेरित किया।

1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के दौरान हिंदी पत्रकारिता ने क्रांतिकारियों की आवाज बनने का प्रयास किया, लेकिन ब्रिटिश सरकार ने प्रेस पर कड़े प्रतिबंध लगाए। विद्रोह को दबाने के लिए अंग्रेजों ने प्रेस की स्वतंत्रता पर अंकुश लगाया, जिससे स्वतंत्रता संग्राम के दौरान निष्पक्ष और राष्ट्रवादी पत्रकारिता करना कठिन हो गया। फिर भी, कुछ समाचार पत्रों ने अपनी भूमिका निभाने का प्रयास किया। इस दौर में प्रकाशित होने वाले समाचार पत्रों ने समाज में स्वतंत्रता और राष्ट्रीयता की भावना को बढ़ावा देने का कार्य किया।

19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में हिंदी पत्रकारिता अधिक संगठित और प्रभावशाली होने लगी। इस समय प्रकाशित होने वाले समाचार पत्रों और पत्रिकाओं में हिंदी भाषा के विकास के साथ-साथ समाज सुधार आंदोलनों, राष्ट्रीय चेतना और राजनीतिक विचारों को भी बढ़ावा दिया गया। 'भारत मित्र' और 'सरस्वती' जैसे पत्रों ने हिंदी भाषा और साहित्य के उत्थान में अभूतपूर्व योगदान दिया। इस काल में कई सामाजिक और धार्मिक सुधार आंदोलनों ने भी पत्रकारिता का सहारा लिया। आर्य समाज, ब्रह्म समाज और अन्य समाज सुधारक संगठनों ने हिंदी पत्र-पत्रिकाओं का उपयोग अपने विचारों के प्रसार के लिए किया।

20वीं शताब्दी की शुरुआत में हिंदी पत्रकारिता ने स्वतंत्रता संग्राम में अपनी भूमिका को और अधिक प्रभावी बनाया। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक, महात्मा गांधी, मदन मोहन मालवीय, गणेश शंकर विद्यार्थी, पंडित माधवराव सप्रे और अन्य स्वतंत्रता सेनानियों ने पत्रकारिता को स्वतंत्रता संग्राम के एक प्रमुख हथियार के रूप में इस्तेमाल किया। 'प्रताप', 'स्वराज्य', 'कर्मवीर', 'हिंदुस्तान' और 'आज' जैसे समाचार पत्रों ने राष्ट्रीयता की भावना को जागृत करने का कार्य किया। विशेष रूप से गणेश शंकर विद्यार्थी के 'प्रताप' ने ब्रिटिश सरकार के दमन के बावजूद जनचेतना फैलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान हिंदी पत्रकारिता केवल राजनीतिक समाचारों तक सीमित नहीं थी, बल्कि इसने समाज सुधार, महिला सशक्तिकरण, शिक्षा और हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार में भी योगदान दिया। महात्मा गांधी के नेतृत्व में 'हरिजन' और 'यंग इंडिया' जैसी पत्रिकाओं ने सामाजिक सुधार के मुद्दों को उठाया। इस

रीना सती, डॉ. शोभा त्रिपाठी

काल में हिंदी पत्रकारिता में निष्पक्षता और सत्यनिष्ठा की भावना को विशेष महत्व दिया गया।

हिंदी पत्रकारिता का प्रारंभिक विकास कठिनाइयों से भरा रहा, लेकिन इसके बावजूद इसने भारतीय समाज में जागरूकता फैलाने, राष्ट्रीयता को बढ़ावा देने और जनमत निर्माण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 19वीं शताब्दी से लेकर स्वतंत्रता संग्राम तक हिंदी पत्रकारिता का स्वरूप धीरे-धीरे विकसित होता गया और इसने भारतीय समाज, राजनीति और संस्कृति को गहरे रूप से प्रभावित किया। पत्रकारिता की इस यात्रा में कई चुनौतियाँ थीं, लेकिन इसके योगदान को नकारा नहीं जा सकता। हिंदी पत्रकारिता का यह ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य यह दर्शाता है कि यह केवल समाचारों का माध्यम नहीं, बल्कि समाज के परिवर्तन और विकास का महत्वपूर्ण अंग रही है।

अध्ययन के उद्देश्य

अध्ययन के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार हैं:

1. हिंदी पत्रकारिता का स्वरूप एवं पत्रकारिता के क्षेत्र का अध्ययन
2. स्वतंत्रता से पूर्व की पत्रकारिता का अध्ययन
3. अंग्रेजों का पत्रकारिता के सम्बन्ध में योगदान का अध्ययन
4. भारतेन्दु युग एवं द्विवेदी युग की पत्रकारिता का अध्ययन
5. आधुनिक हिंदी पत्रकारिता का अध्ययन

स्वतंत्रतापूर्व पत्रकारिता भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की महत्वपूर्ण आधारशिला थी, जिसने जनचेतना जागृत करने, औपनिवेशिक शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने और राष्ट्रीय आंदोलन को दिशा देने में अहम भूमिका निभाई। ब्रिटिश शासन के अधीन भारतीय जनता के अधिकारों का हनन किया जा रहा था, जिसे उजागर करने में पत्रकारिता ने क्रांतिकारी भूमिका निभाई। 19वीं शताब्दी में राजा राममोहन राय द्वारा प्रकाशित संवाद कौमुदी और 'मिरात-उल-अखबार' ने सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों को प्रमुखता से उठाया। इसी तरह, बाल गंगाधर तिलक के 'केसरी' और 'मराठा' ने राष्ट्रवाद को मजबूती प्रदान की, जबकि महात्मा गांधी के 'यंग इंडिया', 'हरिजन' और 'नवजीवन' ने सत्याग्रह और अहिंसा के माध्यम से अंग्रेजों की दमनकारी नीतियों का विरोध किया। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान पत्रकारिता केवल समाचारों का संप्रेषण करने तक सीमित नहीं थी, बल्कि यह एक प्रभावी हथियार के रूप में कार्य कर रही थी। लाला लाजपत राय, गणेश शंकर विद्यार्थी, मदन मोहन मालवीय, और सुभाष चंद्र बोस जैसे नेताओं ने भी पत्रकारिता को अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ संघर्ष का माध्यम बनाया। गणेश शंकर विद्यार्थी द्वारा संपादित 'प्रताप' ने किसानों, मजदूरों और आम जनता के अधिकारों की वकालत की। ब्रिटिश सरकार ने राष्ट्रवादी पत्रकारों और पत्र-पत्रिकाओं पर सेंसरशिप, दंड, प्रतिबंध और कई कठोर कानून थोपे, जैसे वर्नाक्युलर प्रेस एक्ट, 1878, लेकिन पत्रकारों ने अपने दायित्व से समझौता नहीं किया। इस दौर की पत्रकारिता ने भारतीय समाज में राजनीतिक चेतना का संचार किया और स्वतंत्रता आंदोलन को मजबूती दी। स्वातन्त्र्यपूर्व पत्रकारिता न केवल क्रांति का वाहक बनी, बल्कि इसने स्वतंत्र भारत के लोकतांत्रिक मूल्यों की नींव भी रखी।

मानव सभ्यता के इतिहास में कागज निर्माण एवं मुद्रण तकनीक का आविष्कार और सर्वप्रथम

समाचार पत्र निकालने का श्रेय भी चीन को जाता है। चीन में मुद्रित एवं प्रकाशित प्रथम अखबार का नाम 'पीपिंग गजट' या 'तिचाआ' था। यह एक सरकारी प्रकाशन था। श्री कमलापति त्रिपाठी, श्री रामकृष्ण, रघुनाथ खाडिलकर और श्री एस. नटराजन ने पीपिंग गजट को ही विश्व का पहला समाचार पत्र स्वीकार किया है। यह समाचार पत्र पंद्रह सौ वर्षों तक सफलतापूर्वक निकलता रहा। परन्तु यह समाचार पत्र 1912 में माचू वंश के पतन के बाद बंद हो गया। अतः चीन के मांचू को पहले समाचार पत्र प्रबंधन समूह का दर्जा दिया जा सकता है। भारत में सबसे पहला प्रेस पुर्तगाली मिशनरी द्वारा सन् 1550 ई. में शुरू किया गया था। भारत में आधुनिक अर्थों में समाचार पत्र का प्रारम्भ अंग्रेजी भाषा में किया।

पत्रकारिता सूचना प्राप्त करने एवं उन सूचनाओं का आगे प्रसार करने का कार्य है। पहले पत्रकारिता का संबंध एक संकुचित रूप में समाचार पत्रों के लिए सूचना प्राप्त करने एवं उनके प्रसार से लिया जाता था, लेकिन आधुनिक समय में पत्रकारिता का क्षेत्र एवं भूमिका अलग-अलग क्षेत्रों में देखी जाने लगी है। आज जिस पत्रकारिता को हम समाचार पत्र, रेडियो, टेलीविजन एवं इंटरनेट जैसे सशक्त इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से जानते हैं, पूर्वकाल में यह कार्य शासकों द्वारा अपने कुछ चयनित कर्मचारियों के द्वारा किया जाता था। उस समय सूचना प्रदान करने की प्रकृति एवं उद्देश्य केवल शासक की भलाई के संबंध में ही कार्य करना था, तत्कालीन समाचार वाहक स्वतंत्रापूर्वक अपनी इच्छा से कार्य नहीं कर सकता था। लेकिन आज पत्रकार स्वच्छंद रूप से अपना कार्य करते हैं। भारत में पत्रकारिता के संबंध में जानकारी प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि हम इसके उद्भव और विकास के बारे में जानकारी प्राप्त करें।

समाज के विचारों और साहित्य की संवाहिका को पत्रकारिता के रूप में जाना जाता है जो समाज और साहित्य के इतिहास में अपना विशेष स्थान बनाकर उसका निर्माण करती है। ग्रंथों में समाहित साहित्य से जो संभव नहीं था वह आज पत्र-पत्रिकाओं के साहित्य ने साकार कर दिखाया है। स्वतंत्रता से पूर्व के पत्र स्वाधीनता संग्राम के लिए अस्त्र और शस्त्र के रूप में प्रयोग हुए, आंग्ल शासकों का कोपभाजन बनकर भारतीय पत्र-पत्रिकाओं ने समाज को नई दिशा प्रदान की। यंग इंडिया, हरिजन, आज, स्वदेश, कर्मभूमि, प्रताप, रणभेरी, सेनापति जैसे अनेक पत्रों ने भारतीय जनता को अत्याधिक प्रभावित किया।

स्वतंत्रता से पूर्व की पत्रकारिता तेजस्विनी, ओजस्विनी, निर्भय, परम न्यायपरायण तथा सर्वत्र पुण्य सूचारिणी रही है। महर्षि अरविंद, भूपेन्द्रनाथ दत्त, डॉ. एनी बेसेंट, गोपाल कृष्ण गोखले, बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपत राय, विपिन चन्द्र पाल, चितरंजनदास, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, महात्मा गांधी, जवाहर लाल नेहरू, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद आदि अनेक नेताओं ने राष्ट्र की सेवा हेतु पत्रों से अपना नाता जोड़ा। महान साहित्य विशेषज्ञ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, लाल खड्ग बहादुर मल्ल, अम्बिका प्रसार बस, गणेश शंकर विद्यार्थी, प्रताप नारायण मिश्र, मुंशी प्रेमचंद, बाबूराव विष्णु पराडकर, माखनलाल चतुर्वेदी, लक्ष्मण नारायण गर्दै, बालकृष्ण शर्मा शनवीनश तथा कृष्णदत्त पालीवाल ने पत्रकारिता को राष्ट्रीय नव जागरण का साधन स्वीकार किया और मिशन के रूप में इसको त्यागशील संघर्षमयी परम्परा का नियामक माना।

जीवन की विविधता और नए नए साधनों की प्रचुरता ने पत्रकारिता को बहुआयामी बना दिया है। आज पत्रकार अपनी रुचि एवं प्रवृत्ति के अनुसार अपने लिए विशिष्ट क्षेत्रों का चयन कर रहे हैं क्योंकि वर्तमान समय पूर्णतया

रीना सती, डॉ. शोभा त्रिपाठी

विशिष्टीकरण की ओर अग्रसर है। पत्रकारिता और स्वतंत्रता का बहुत गहरा संबंध है। मनुष्य की महिमा को कमजोर करने वाली हर प्रकार की पराधीनता के विरुद्ध सशक्त आवाज उठाना ही पत्रकारिता का मुख्य उद्देश्य है। देश की आजादी की लड़ाई मुख्यतः पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से लड़ी गई। स्वतंत्रता संग्राम को गतिशील बनाने में पत्रकारिता की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। हिन्दी पत्रकारिता की शुरुआत 1826 में बंगाल से हुई। 30 मई 1826 को हिन्दी के पहले समाचार पत्र 'उदन्त मार्तण्ड' का कलकत्ता से प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम एवं बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों में कलकत्ता से अनेक विशेष पत्र पत्रिकाएं हिन्दी के शीर्षस्थ नामचीन पत्रकारों के सम्पादन में प्रकाशित हुईं। हिन्दी के अनेक पत्रकारों की साधना भूमि कलकत्ता रही है। इन पत्रकारों ने लोकनायक की भूमिका का निर्वाह करते हुए हमेशा संघर्ष किया। इसी संघर्ष में पत्रकारिता के प्रकाशमान अतीत ने राष्ट्रीयता, जातीयता, संस्कृति भाषा और साहित्य के विकास का मार्ग प्रशस्त किया।

भारतीय पत्रकारिता की जन्मभूमि कलकत्ता को कहा जा सकता है। भारत में सर्वप्रथम कलकत्ता के उपनगर श्रीरामपुर से मुद्रण कार्य शुरू हुआ था। मुद्रण की सुविधा पत्र प्रकाशन की प्रेरणा बनी। इसी प्रेरणा से भारत में पहला पत्र बंगाल गजट आफ कलकत्ता जेम्स ऑगस्ट हिक्की ने 29 जनवरी 1780 ई. में प्रकाशित किया था। भारत में हिन्दी ने अपने पत्र के माध्यम से हेस्टिंग्स सरकार के प्रशासन की कमियों को उजागर करना शुरू किया। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भारत में प्रकाशित प्रथम पत्र ने ही पत्रकारिता की सही भूमिका की ओर संकेत किया था। इस पत्र द्वारा हिक्की ने पत्रकारिता की उज्ज्वल परम्परा की दीवार की पहली इंट रखी थी। अपने निर्भीक आचरण के लिए न केवल हिक्की वरन् उन सभी पत्रकारों को जो न्याय के पक्ष में आवाज उठाते हुए अंग्रेज सरकार की शासन शैली की आलोचना कर रहे थे, सरकार का कोपभाजन बनना पड़ा। हेस्टिंग्स की कटु आलोचना का पुरस्कार हिक्की को जेल यातना के रूप में मिला। उत्तरी अमेरिका निवासी विलियम हुआनी ने हिक्की की परम्परा को समृद्ध किया। 1785 में प्रकाशित बंगाल जनरल जो सरकार का पक्ष समर्थक था, 1791 में हुआनी के सम्पादक बन जाने पर इसने अपन स्वर बदल लिए और सरकार की आलोचना करने लगा। इसके बाद हुआनी ने इण्डियन वर्ल्ड नामक स्वयं का पत्र निकाला।

हुआनी की आक्रामक मुद्रा से आतंकित होकर सरकार ने उसे भारत से निष्कासित कर दिया। इस प्रकार हिक्की ने पत्रकारिता के क्षेत्र में जो दीप प्रज्ज्वलित किया था वो अनवरत जलता रहा। इसी कड़ी में भारतीय पत्रकारों के प्रेरक ओर पत्रकारिता के आदिप्रवर्तक के रूप में राजा राममोहन राय का नाम इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखा हुआ है। इनके मित्र ताराचंद दत्त और भवानी चरण बनर्जी के सम्पादन में प्रथम भारतीय भाषायी पत्र बांग्ला भाषा में 1820 ई. में 'संवाद कौमुदी' नाम से प्रकाशित हुआ। देशी पत्रों और भारतीय पत्रकारिता के रास्ते में अनेक व्यवधान थे। भारतीय पत्रकारिता को अपनी यात्रा के प्रथम चरण में ही सरकारी अंकुश से जूझना पड़ा। विभिन्न बाधाओं और प्रतिकूल माहौल के कारण विभिन्न पत्रों की यात्रा बार-बार अवरूद्ध और स्थगित होती रही किन्तु उस समय के पत्रकारों की निष्ठा के सामने सरकार भी लाचार ही रही और उन्हें उनके

मार्ग से हटा नहीं सकी। मुद्रा बदल-बदल कर विभिन्न रूपों में वे अपनी वास्तविक भूमिका का निर्वाह करते रहे और देश प्रेम की भावना विभिन्न प्रतिबंधों के बावजूद कुंठित नहीं हुई।

सांस्कृतिक मूल्यों की पहरेदारी और उन्नति में हिन्दी पत्रकारिता की अग्रणी भूमिका रही है। आज देश के हर क्षेत्र में सांस्कृतिक मूल्यों की अवमानना और अनुशासनहीनता का बोलबाला है। आज की हिन्दी पत्रकारिता की समृद्ध भाषा हिन्दी की शक्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इस दृष्टि से आज की पत्रकारिता की उन्नति पर गर्व किया जा सकता है। जहां तक स्वतंत्रता पूर्व काल के पत्रकारों का प्रश्न है वे स्वभाषा गर्व से स्फूर्त थे। स्वयं की भाषा की उन्नति को वे समग्र उन्नति मानते थे। इसलिए अपनी भाषा की उन्नति के लिए वे निरन्तर जागरूक और क्रियाशील रहते थे।

राजनीतिक और सामाजिक चेतना के क्रमिक विकास के साथ ही स्वतंत्रता पूर्व की हिन्दी पत्रकारिता ने साहित्य संवेदना को ही अपेक्षित दिशा की ओर अग्रसर किया। उस काल की साहित्यिक पत्रिकाएं हिन्दी क्षेत्र के पूरे विवेक और प्रतिभा का सम्पूर्णता से प्रतिनिधित्व करती हैं। स्वतंत्रता के पश्चात भी लगभग एक दशक तक यह परम्परा जीवित हैदराबाद से प्रकाशित कल्पना विशेष रूप से उल्लेखनीय है। हिन्दी की साहित्यिक पत्रिकाओं ने साहित्यिक संवेदना को गतिशील और उन्नत करने में विशिष्ट भूमिका का निर्वहन किया। साहित्यिक पत्रकारिता की इतनी समृद्ध परम्परा वाले विशाल क्षेत्र में आज हिन्दी के विवेक और प्रतिभा के समग्र और प्रमाणिक प्रतिनिधित्व करने वाली पत्रिकाओं का सर्वथा अभाव परिलक्षित होता है।

हिन्दी पत्रकारिता का जन्म और विकास प्रतिकूल परिस्थितियों में पराधीन काल की जटिल चुनौतियों के मध्य हुआ था। मगर जितनी विपरीत परिस्थितियां थी उस काल के पत्रकारों की प्रेरणा उतनी ही महान थी। पुराने पत्रकार स्वयं के स्वार्थ से पत्रकारिता से नहीं जुड़े थे वरन् उच्च आदर्शों ने उन्हें पत्रकारिता की राह पकड़ने को प्रेरित किया था। पत्रकारिता देश सेवा की उपयुक्त राह थी। देश सेवा एवं देश प्रेम उस काल के पत्रकारों की मुख्य प्रेरणा थी। इस प्रेरणा का मुकाबला साम्राज्यवादी दैत्य से था जो नृशंस शासन तंत्र से ही उसे कुचल देने पर आमादा था। पत्रकारिता की अदम्य शक्ति को कुंठित करने के लिए सरकार तरह-तरह के जटिल कानून बनाती रहती थी। सरकारी अनौचित्य के खिलाफ उठने वाली भारतीय पत्रकारों की आवाज को दबाने के लिए अंग्रेजी सरकार न्याय और नीति से आंख मूंद लेती थी। इसी अनुदारता के कारण कई पत्रों का प्रकाशन स्थागित कर देना पड़ा था।

आदि काल के पत्रकारों का संघर्ष विभिन्न शक्तियों से था, जिस हिन्दी समाज के जागरण का उद्देश्य लेकर पत्रों की यात्रा शुरू हुई थी उस समाज में इन पत्रों और आधुनिक ज्ञान को आत्मसात करने का सर्वथा अभाव था। पण्डित युगल किशोर शुक्ल ने 4 दिसम्बर, 1827 ई. के उदन्त मार्तण्ड के अंक में अपनी कठिनाईयों का जिक्र करते हुए लिखा था कि कठोर, परती जमीन को उर्वर बनाने के लिए उन्हें कितनी तपस्या करनी पड़ती थी फिर

रीना सती, डॉ. शोभा त्रिपाठी

भी प्रतिकूल परिस्थितियों ने उनकी साध को अधुरा ही समाप्त कर दिया। हिन्दी को आदि पत्रकारों ने हिन्दी समाज के असहयोग की चर्चा अपनी व्यथा के साथ बार-बार की थी। जिनके लिए वे कठिन तपस्या कर रहे थे उन्हीं का असहयोगात्मक रवैया उन्हें व्यथित कर देता था। पत्र को तैयार कर, छापकर अपने ग्राहकों को जाकर पढ़कर सुनाना और समझाना पड़ता था। इस प्रकार ज्ञान की नई रोशनी के लिए अनुकूल माहौल तैयार करना उस काल के पत्रकारों की साधना थी। उस जमाने में पत्रकारिता से जुड़ना नाना प्रकार की यातना को न्यौता देना था। वे ऐसे पत्रकार थे जो अपने धर्म-पत्रकारिता को गतिशील रखने के लिए घर को धान पुआल में मिलाने के सहज उत्साह से प्रेरित थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची

- 1) कुमार, परिमल, रिपोर्ट ऑन द ग्राउंड
- 2) बाबी प्रकाशन, हिन्दी पत्रकारिता : इतिहास और प्रश्न
- 3) कामथ, एम.बी., प्रोफेशनल जर्नलिज्म
- 4) तिवारी, अर्जुन, हिंदी पत्रकारिता का वृहद इतिहास



Make Your Future Bright With
Glocal University Saharanpur

NIRF Rank Holder

Asia Ranking 801

Sub Regional Rank in South Asia 254

- GLOCAL SCHOOL OF SCIENCE & TECHNOLOGY
- GLOCAL COLLEGE OF AYURVEDIC MEDICAL SCIENCE & RESEARCH CENTRE
- GLOCAL UNIVERSITY PHARMACY COLLEGE/SCHOOL OF PHARMACEUTICAL SCIENCES
- GLOCAL SCHOOL OF BUSINESS & COMMERCE
- GLOCAL SCHOOL OF LIFE & ALLIED HEALTH SCIENCES
- GLOCAL SCHOOL OF ARTS AND SOCIAL SCIENCE
- GLOCAL UNANI MEDICAL COLLEGE, HOSPITAL & RESEARCH CENTRE
- GLOCAL SCHOOL OF NATUROPATHY & YOGIC SCIENCE
- GLOCAL COLLEGE OF PARAMEDICAL SCIENCE & RESEARCH CENTRE
- GLOCAL SCHOOL OF AGRICULTURE SCIENCE
- GLOCAL LAW SCHOOL
- GLOCAL COLLEGE OF NURSING & RESEARCH CENTRE
- GLOCAL SCHOOL OF JOURNALISM & MASS COMM
- GLOCAL SCHOOL OF SCIENCE

*All courses are affiliated with the respective Departments

*Reasonable fees, Healthy Environment, Rich Labs

*Highly qualified and experienced faculty

*Overall development with extra curricular activities.

आईएसएसएन नं. 3048-8664

ग्लोकल दृष्टि GLOCAL DRISHTI

वर्ष 2, अंक: 3-4, सितम्बर-दिसम्बर 2025, पृष्ठ 69-75

ग्लोकल विश्वविद्यालय

समाचार वीथिका

जुलाई 2025 – दिसंबर 2025

संरक्षण: श्री सैयद निजामुद्दीन APC, प्रोफेसर हृदय शंकर सिंह (कुलपति), प्रोफेसर जॉन फिन्बे (उपकुलपति), प्रोफेसर शिवानी तिवारी (कुलसचिव)

1. 28 जुलाई 2025, छात्र कल्याण अधिष्ठाता, राष्ट्रीय सेवा योजना (एनएसएस) इकाई एवं यूथ विजन वेलफेयर सोसाइटी के संयुक्त तत्वावधान में एक गरिमामयी कार्यक्रम का आयोजन संपन्न हुआ। कार्यक्रम के अंतर्गत नृत्य और गायन प्रतियोगिता का भी आयोजन किया गया, जिसमें राष्ट्रीय सेवा योजना के प्रतिभागियों ने अपनी प्रतिभा से दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर दिया। इसमें विश्वविद्यालय से लगभग 150 छात्रों ने सहभागिता की। नृत्य प्रतियोगिता में द्वितीय एवं तृतीय स्थान तथा गायन प्रतियोगिता में द्वितीय और तृतीय स्थान पर विश्वविद्यालय के छात्र-छात्राओं ने अपना स्थान सुनिश्चित किया। पुरस्कार विजेताओं में सलोनी धीमान, प्राची, नीशू, विक्रान्त, सदफ नाज, नजराना, मो. कैफ सहित अन्य प्रतिभागियों के नाम उल्लेखनीय रहे, जिन्होंने अपनी प्रतिभा से विश्वविद्यालय का गौरव बढ़ाया। निर्णायक मंडल में ग्लोकल विश्वविद्यालय की ओर से शशांक पाल असिस्टेंट प्रोफेसर पैरामेडिकल विभाग रहे। संगीत एवं नृत्य प्रतियोगिता का संचालन मुदास्सिर पटेल और इल्मा चौहान द्वारा संयोजित रूप से किया गया।

2. 10 जुलाई 2025, राष्ट्रीय सेवा योजना यूनिट 1 और 2, भारत सरकार की वन संरक्षण योजना के अंतर्गत एक पेड़ मां के नाम" अभियान का प्रारंभ डॉ शोभा त्रिपाठी और डॉक्टर संजीव नांदल के संयोजन में किया गया। इस अभियान के अंतर्गत विश्वविद्यालय प्रांगण में 2000 पौधे लगाए गए।

3. 12 अगस्त 2025, ग्लोकल विश्वविद्यालय, सहारनपुर, माननीय अतिरिक्त कुलाधिपति श्री सैयद निजामुद्दीन जी के, माननीय कुलपति प्रोफेसर हृदय शंकर सिंह जी और कुलसचिव प्रोफेसर शिवानी तिवारी जी की अगुवाई में भारत सरकार के हर घर तिरंगा अभियान के अंतर्गत एक तिरंगा रैली का आयोजन किया गया। छात्र कल्याण अधिष्ठाता और राष्ट्रीय सेवा योजना की कार्यक्रम अधिकारी डॉक्टर शोभा त्रिपाठी के संयोजन में समस्त कार्यक्रम हुआ।

4. 15 अगस्त 2025, ग्लोकल विश्वविद्यालय सहारनपुर और राष्ट्रीय सेवा योजना यूनिट 1 और 2 के संयुक्त

ग्लोकल दृष्टि, वर्ष 2, अंक: 3-4, सितम्बर-दिसम्बर 2025

तत्वावधान में स्वतंत्रता दिवस बड़े ही उत्साह और गरिमा और रंगारंग कार्यक्रम के साथ मनाया गया।

5. 17 अगस्त 2025, भारत सरकार द्वारा चलाए जा रहे रक्तदान शिविर पखवाड़े के अंतर्गत राष्ट्रीय सेवा योजना की कार्यक्रम अधिकारी डॉक्टर शोभा त्रिपाठी और डॉक्टर संजीव नांदल के संयोजन में विश्वविद्यालय की राष्ट्रीय यूनिट की इकाई एक और इकाई दो द्वारा रक्तदान शिविर का आयोजन ग्लोकल हॉस्पिटल में किया गया। रक्तदान के महत्व को समझते हुए तेज बारिश के बावजूद चीफ प्रॉक्टर जमीर उल इस्लाम, मेस कर्मचारी प्रेम सिंह, अमित कुमार, शुभम कुमार, राहुल, इरफान, संदीप, अनिल, आर्यन, इमरान, छात्रा शेख नुजहत, इकरा, छात्र तैय्यब, रेयान, वैभव, सत्यम, अभिषेक, अवकाश, ऋषभ ने स्वेच्छा से रक्तदान किया। जिला अस्पताल प्रतिनिधि आबिद खान ने सभी रक्तदाताओं को प्रमाण पत्र प्रदान किया।

6. दिनांक 25 अगस्त 2025 डॉ. शोभा त्रिपाठी एवं डॉ. संजीव नांदल ने माँ शाकंभरी विश्वविद्यालय में होने वाले वर्कशॉप समीक्षा बैठक में सहभागिता की। कार्यक्रम की अध्यक्षता विश्वविद्यालय की माननीय कुलपति प्रोफेसर विमला बाई ने की मुख्य अतिथि के रूप में राज्य संपर्क अधिकारी प्रोफेसर मंजू सिंह ने सहभागिता की।

7. 10 सितंबर 2025 को माँ शाकंभरी विश्वविद्यालय में होने वाले प्रीआरडी टेस्ट में ग्लोबल विश्वविद्यालय के 6 बच्चों ने सहभागिता की। जिनके नाम हैं सौरभ कुमार, अभिषेक कुमार, सूरज, अंशु, जेसिका गुप्ता और खुशी गुप्ता

8. 20 सितम्बर 2025, डॉ शोभा त्रिपाठी व छात्रों की ऑनलाइन मिशन शक्ति के उद्घाटन सत्र में सहभागिता नारी सुरक्षा, सम्मान एवं स्वावलंबन के लिए समर्पित 'मिशन शक्ति-5.0' का शुभारंभ, सभी 1,647 थानों में नवस्थापित मिशन शक्ति केंद्रों का उद्घाटन, मिशन शक्ति केंद्रों से संबंधित SOP की पुस्तिकाओं का विमोचन एवं विभिन्न जन-कल्याणकारी योजनाओं के लाभार्थियों से संवाद कार्यक्रम में सम्मिलित होते हुए मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ जी, उपमुख्यमंत्री माननीय बृजेश पाठक से संवाद किया।

9. 6 अक्टूबर 2025, ग्लोकल विश्वविद्यालय सहारनपुर। छात्र कल्याण अधिष्ठाता डॉक्टर शोभा त्रिपाठी के संयोजन में प्रधानमंत्री विकसित भारत रोजगार योजना का लाभ बताते हुए एक व्याख्यान का आयोजन किया गया इसमें प्रमुख व्याख्याता श्री निखिल तिवारी, प्रवर्तन अधिकारी भारत सरकार रहे। जिन्होंने यू ए एन नंबर और ई पी एफ अकाउंट के लाभ बताते हुए अंतिम वर्ष के छात्र छात्राओं को जागृत किया, जिससे आगे नौकरी में वह इसका लाभ ले सकें।

10. 9 अक्टूबर 2025, भारत सरकार की योजना मिशन शक्ति के अंतर्गत यूनिट 1 और यूनिट 2 के स्वयं सेवियों हेतु साइबर सुरक्षा स्त्रियों के संदर्भ में विषय पर एक व्याख्यान का आयोजन किया गया। इस व्याख्यान का

आयोजन डॉक्टर शोभा त्रिपाठी के निर्देशन में किया गया। विषय की व्याख्याता डॉ आतेका बानो डीन स्कूल ऑफ लॉ रहीं। उन्होंने अपने व्याख्यान में कहा कि आज के डिजिटल युग में स्त्रियों के लिए साइबर सुरक्षा अत्यंत आवश्यक हो गई है। सोशल मीडिया, ऑनलाइन लेन-देन और डिजिटल संचार के बढ़ते प्रयोग के साथ महिलाओं को साइबर अपराधों जैसे फेक प्रोफाइल, ऑनलाइन ठगी, ट्रोलिंग, साइबर स्टॉकिंग और डेटा चोरी का सामना करना पड़ सकता है। इसलिए आवश्यक है कि महिलाएं अपनी डिजिटल जागरूकता बढ़ाएँ – जैसे मजबूत पासवर्ड का उपयोग करें, निजी जानकारी किसी अनजान व्यक्ति से साझा न करें, सोशल मीडिया पर गोपनीयता सेटिंग्स का सही उपयोग करें और संदिग्ध लिंक या कॉल से सावधान रहें। किसी भी प्रकार की ऑनलाइन धमकी या उत्पीड़न की स्थिति में तुरंत साइबर क्राइम सेल या महिला हेल्पलाइन से संपर्क करें। एक सतर्क, जागरूक और आत्मविश्वासी महिला न केवल स्वयं को सुरक्षित रख सकती है बल्कि दूसरों को भी डिजिटल सुरक्षा के प्रति प्रेरित कर सकती है। इस अवसर पर दोनों यूनिट के 140 छात्र छात्राएं उपस्थित रहे।

11. 9 October 2025, छात्र कल्याण अधिष्ठाता संकाय सदस्य मिस दीपिका के संरक्षण में नारी सशक्तिकरण पर मेहंदी प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इस आयोजन में 30 छात्राओं ने सहभागिता की।

12. छात्र कल्याण अधिष्ठाता छात्र क्लब और राष्ट्रीय सेवा योजना की ओर से एक मुशायरे का सफल आयोजन किया गया। इस आयोजन के फैंकल्टी संयोजक मिस्टर बिलाल अहमद तथा छात्र संयोजक मुदस्सिर पटेल रहे। कार्यक्रम का प्रारंभ अतिरिक्त कुलाधिपति श्री सैयद निजामुद्दीन द्वारा शमा रोशन करके किया गया। कार्यक्रम में हमना, अजीज, हुसैन, फुजेल, साक्षी, जायद, साहिब, असजद, मुस्तहाब, समसुद्दीन, अहकाम, मुजम्मिल, सलमा सहित चौबीस छात्र – छात्राओं ने अपने शेर पढ़े। छात्रों की हौसला अफजाई करते हुए छात्र कल्याण अधिष्ठाता डॉ शोभा त्रिपाठी, डॉ. जावेद तथा डॉ. फराज ने भी शेर कहे। समस्त कार्यक्रम की शानदार निजामत मो.मुदस्सिर पटेल ने की।

13. राष्ट्रीय सेवा योजना एवं छात्र कल्याण अधिष्ठाता टीम की ओर से डॉ शोभा त्रिपाठी और श्री जमीरुल इस्लाम के संयोजन में मिशन शक्ति 5.0 के अंतर्गत सुप्रसिद्ध समाजसेवी और वूमेन अचीवर अवार्ड विजेता सुश्री मुबशीरा खान द्वारा सार्थक व्याख्यान दिया गया। इस अवसर पर छात्रों से उन्होंने संवाद भी किया। ए पी जे अब्दुल कलाम पुरस्कार विजेता सुश्री मुबशीरा खान अल्पसंख्यक लड़कियों के लिए शिक्षा के क्षेत्र में कार्य कर रही हैं अतः उनका वक्तव्य मूल रूप से अल्पसंख्यक समाज की स्त्रियों पर केंद्रित रहा। उन्होंने अपने वक्तव्य में कहा कि अल्पसंख्यक समुदायों की स्त्रियाँ आज भी शिक्षा के क्षेत्र में अनेक सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक चुनौतियों का सामना कर रही हैं। यद्यपि समय के साथ जागरूकता और सरकारी योजनाओं के माध्यम से शिक्षा का प्रसार हुआ है, फिर भी इन समुदायों की महिलाओं की साक्षरता दर अपेक्षाकृत कम है। परंपरागत सोच, आर्थिक अभाव, बाल विवाह, तथा घर की चारदीवारी तक सीमित रहने की बाध्यताएँ उनकी शैक्षिक प्रगति में प्रमुख अवरोध हैं। इसके बावजूद, अनेक अल्पसंख्यक महिलाएँ अपने अधिकारों और

पहचान के लिए संघर्षरत हैं। वे शिक्षा को स्वतंत्रता और सशक्तिकरण का माध्यम मानते हुए आगे बढ़ रही हैं। मदरसों में सुधार, छात्रवृत्तियाँ, और कौशल विकास योजनाएँ इन महिलाओं के लिए नई संभावनाएँ खोल रही हैं। उनके संघर्ष की कहानी न केवल प्रेरक है बल्कि यह भी दर्शाती है कि यदि अवसर और समर्थन मिले, तो अल्पसंख्यक समुदाय की स्त्रियाँ भी समाज की मुख्यधारा में समान रूप से योगदान दे सकती हैं। उनसे प्रश्न करने वाले छात्रों में अलीना, अभिषेक, महक आदि प्रमुख थे।

14. 28 और 29 अक्टूबर 2025, राष्ट्रीय सेवा योजना के कार्यक्रम अधिकारी डॉ शोभा त्रिपाठी और श्री जमीरुल इस्लाम के संयोजन में सरदार वल्लभभाई पटेल की 150 में जयंती का चार दिवसीय आयोजन किया गया। जिसके अंतर्गत 28 अक्टूबर को निबंध लेखन प्रतियोगिता तथा 29 अक्टूबर को पोस्टर प्रतियोगिता, वाद विवाद प्रतियोगिता तथा व्याख्यान का आयोजन किया गया। निबंध प्रतियोगिता में प्रथम स्थान नाजिया, द्वितीय तौसीफ तथा तृतीय स्थान अलीशा को प्राप्त हुआ। वाद विवाद प्रतियोगिता में प्रथम स्थान जैद जुलकदर, द्वितीय अदीबा गौर तथा तृतीय सलमा को प्राप्त हुआ। पोस्टर प्रतियोगिता में प्रथम स्थान गायत्री सिंघल, द्वितीय मो. जैद तथा तृतीय नाजिया को प्राप्त हुआ। इस अवसर पर सरदार वल्लभभाई पटेल के जीवन चरित्र और उनके कार्य पर डॉक्टर मोहम्मद वाजिद खान द्वारा एक महत्वपूर्ण वक्तव्य प्रस्तुत किया गया। उन्होंने सरदार वल्लभभाई पटेल का जीवन वृत्त बताते हुए कहा कि सरदार वल्लभभाई पटेल भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के महान योद्धा, कुशल प्रशासक और अद्वितीय राष्ट्र निर्माता थे। उन्हें भारत का "लौह पुरुष" कहा जाता है, क्योंकि उन्होंने अटूट इच्छाशक्ति और दृढ़ संकल्प से देश को एकता के सूत्र में पिरोया। आयोजन के तीसरे दिन योग, स्वच्छता अभियान तथा हेल्थ एंड हाइजीन पर डॉ. कलीम एसोसिएट प्रोफेसर यूनानी का व्याख्यान हुआ जिसमें उन्होंने कहा कि स्वास्थ्य ही सबसे बड़ी संपत्ति है, इसे स्वच्छता से सँवारिए। हमें शारीरिक मानसिक और सामाजिक रूप से स्वस्थ रहना चाहिए। अंतिम दिवस पर एकता के लिए दौड़ का आयोजन किया गया। रैली का शुभारंभ डॉ रेहान प्रिंसिपल यूनानी द्वारा किया गया। जिसमें सभी विभाग अध्यक्ष, फैकल्टी मेंबर और छात्रों ने सहभागिता की।

15. 4 नवम्बर 2025, राष्ट्रीय सेवा योजना और छात्र कल्याण अधिष्ठाता टीम द्वारा मिशन शक्ति 5.0 के अंतर्गत एक वाद विवाद प्रतियोगिता का आयोजन मिस फातिमा आकिल के संयोजन में हुआ। वाद विवाद का विषय था तकनीकी महिलाओं को सुरक्षित बनाती है। इस आयोजन में कुल 24 छात्र छात्राओं ने सहभागिता की। आयोजन के निर्णायक मंडल में डॉ रेशमा ताहिर, डॉ इरशाद और मिस साक्षी लांबा रही। समापन के अवसर पर छात्र कल्याण अध्यक्षता डॉक्टर शोभा त्रिपाठी ने अपने वक्तव्य में कहा कि आज के डिजिटल युग में तकनीक महिलाओं की सुरक्षा का सबसे सशक्त माध्यम बन गई है। मोबाइल एप्लिकेशन, जीपीएस ट्रैकिंग, स्मार्ट वॉच, और इमरजेंसी अलर्ट सिस्टम जैसे नवाचारों ने महिलाओं को आत्मविश्वास और सुरक्षा दोनों प्रदान किए हैं। सुरक्षा ऐप जैसे "112 इंडिया", "हिम्मत", और "माय सेफ्टीपिन" ने महिलाओं को हर समय सुरक्षित रहने की शक्ति दी है। सोशल मीडिया और आनलाइन प्लेटफार्म के माध्यम से महिलाएँ अपने अनुभव साझा कर समाज

ग्लोकल दृष्टि, वर्ष 2, अंक: 3-4, सितम्बर-दिसम्बर 2025

में जागरूकता फैला रही हैं। इस प्रकार तकनीक ने न केवल महिलाओं की सुरक्षा को बढ़ाया है, बल्कि उन्हें आत्मनिर्भर और सशक्त बनने की दिशा में एक नया मार्ग भी प्रदान किया है। प्रतियोगिता में टीम ए विजेता टीम रही। जिसके सहभागी थे अफसा वंशिका फैसल अलीना वासी और महक। छात्र कोऑर्डिनेटर में हमना साक्षी, खुशी और फायजा ने सहयोग किया।

16. “ 6 नवम्बर 2025 ”लिंकडइन प्रोफाइल बिल्डिंग पर सेमिनार ,डीन स्टूडेंट्स वेलफेयर (DSW) स्टूडेंट क्लब एवं राष्ट्रीय सेवा योजना द्वारा न्यू इनोवेशन एंड रिसर्च के बैनर तले ग्लोकल विश्वविद्यालय, सहारनपुर में एक दिवसीय सेमिनार ”लिंकडइन प्रोफाइल बिल्डिंग“ का आयोजन डॉक्टर सना जकी के संयोजन किया गया। श्री मोहम्मद कैफ मलिक, बी.सी.ए. अंतिम वर्ष के छात्र, ग्लोकल स्कूल ऑफ साइंस एंड टेक्नोलॉजी ने लिंकडइन प्रोफाइल निर्माण पर विस्तृत प्रस्तुति दी। उन्होंने लिंकडइन के विभिन्न फीचर्स, नेटवर्किंग के उपयोग और प्रोफाइल को आकर्षक बनाने के व्यावहारिक तरीकों को समझाया। अंत में सभी प्रतिभागियों को ई-सर्टिफिकेट्स वितरित किए गए।

17. 15 नवम्बर 2025, राष्ट्रीय सेवा योजना के छात्रों द्वारा जनजातीय गौरव पखवाड़ा के अंतिम दिवस छात्रों की टीम पडकौली बन गुर्जर डेरा में गई। जहां पर उन्होंने वन गुर्जरों की जीवन शैली, उनकी सांस्कृतिक विरासत और आधुनिक युग में उनकी समस्याओं पर गहन अध्ययन किया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में शाबान चौधरी प्रत्याशी सदस्य वार्ड न 7 तथा विशिष्ट अतिथि के रूप में डायल 112 के सब इंस्पेक्टर अमित कुमार यादव तथा सुमित उपस्थित रहे। इस अवसर पर वन गुर्जर के प्रतिनिधि नूर ने अपनी बात रखते हुए कहा कि हमें पुनर्वास की आवश्यकता है जंगल जंगल भटकते रहने से हमारी जिंदगी व्यवस्थित नहीं हो पाती अतः सरकार हमें पुनर्वासित करने की पहल करें तो हमारे भी बच्चों का जीवन सुखद होगा। उन्होंने अपना परंपरागत गीत बहुत ही मधुर स्वर में गाया, जिसे सुनकर सभी भाव विभोर हो उठे। विश्वविद्यालय की छात्रा सलमा ने वन गुर्जरों की समस्या रखी और उनकी भाषा में एक गीत भी प्रस्तुत किया। छात्र मुदस्सिर ने उनको शिक्षा के प्रति जागृत करते हुए अपना वक्तव्य दिया और कुछ शेर सुनाएं। विश्वविद्यालय के छात्रों ने गुर्जर बच्चों में चिप्स, बिस्कुट और चॉकलेट के पैकेट बांटे।

18. 17 नवंबर 2025, तंबाकू निषेध कार्यक्रम। इस अवसर पर छात्र कल्याण अधिष्ठाता डॉ शोभा त्रिपाठी ने प्रभावी और प्रेरणादायक भाषण दिया गया। उन्होंने तंबाकू से होने वाले शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक नुकसानों पर प्रकाश डाला तथा छात्रों को नशामुक्त जीवन जीने की शपथ दिलाई। मिस्टर बिलाल असिस्टेंट प्रोफेसर एग्रीकल्चर ने कहा कि तंबाकू सेवन न केवल व्यक्तिगत स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है बल्कि यह समाज और परिवार पर भी दीर्घकालिक नकारात्मक प्रभाव डालता है। हम अपनी आत्मा शक्ति से तंबाकू सेवन छोड़ सकते हैं। कार्यक्रम के दौरान हॉस्टल में रहने वाले छात्रों को समुचित निर्देश दिए गए। विश्वविद्यालय को तंबाकू मुक्त परिसर घोषित करते हुए इसके पास किसी भी प्रकार की तंबाकू की दुकान को प्रतिबंधित किया गया और परिसर के आसपास तंबाकू की बिक्री एवं सेवन पूर्णतः निषिद्ध किया गया। छात्र कल्याण अधिष्ठाता

कार्यालय ने छात्रों को यह भी निर्देशित किया कि वे स्वयं स्वस्थ जीवन शैली अपनाएँ और दूसरों को भी नशामुक्ति के लिए प्रेरित करें।

19. 19 नवंबर 2025, ग्लोकल यूनिवर्सिटी में मिशन शक्ति 5.0 के अंतर्गत छात्राओं हेतु स्वास्थ्य जाँच शिविर का सफल आयोजन छात्र कल्याण अध्यक्षता और राष्ट्रीय सेवा योजना के संयुक्त तत्वावधान में छात्राओं के लिए स्वास्थ्य शिविर का आयोजन किया गया। इस आयोजन की समन्वयक छात्र कल्याण अधिष्ठाता टीम की सदस्य डॉ. सना जकी (एसोसिएट प्रोफेसर, विभाग इमलुल अदविया, ग्लोकल यूनानी मेडिकल कॉलेज) रहीं। शिविर में 80 छात्राओं का निशुल्क स्वास्थ्य परीक्षण किया गया।

20. 26 नवम्बर 2025, ग्लोकल विश्वविद्यालय में संविधान दिवस कार्यक्रम का सफल आयोजन राष्ट्रीय सेवा योजना एवं ग्लोकल लॉ स्कूल के संयुक्त तत्वावधान में मनाया गया। कार्यक्रम का संयोजन मिस शहनाज ने किया। इस अवसर पर मुख्य वक्ता डॉ. मोहम्मद वाजिद खान, असिस्टेंट प्रोफेसर, विधि विभाग ने संविधान की मूल भावना, नागरिक कर्तव्यों और भारतीय लोकतंत्र की विशेषताओं पर अत्यंत प्रभावशाली व प्रेरक व्याख्यान प्रस्तुत किया। उन्होंने कहा कि संविधान केवल एक दस्तावेज नहीं, बल्कि भारतीय समाज की विविधता, समावेशिता और न्याय के प्रति हमारी प्रतिबद्धता का प्रतीक है। कार्यक्रम का संचालन मोहम्मद शाहिद ने सधे और प्रभावपूर्ण अंदाज में किया, जिन्होंने पूरे आयोजन को व्यवस्थित और संवादी बनाए रखा। इस अवसर पर छात्रा अलीना राशिद, आयशा कुरैशी और फायजा राव ने भी अपने विचार अभिव्यक्त किए।

21. 28 नवम्बर 2025, दीक्षांत समारोह का सफल आयोजन हुआ। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि सुप्रसिद्ध समाजसेवी पूर्व सांसद ओमपाल सिंह निडर रहे। विशिष्ट अतिथि डॉ. महेश व्यास, ऑल इंडिया इंस्टिट्यूट ऑफ आयुर्वेद नई दिल्ली के डीन रहे। उपकुलपति प्रोफेसर डॉ. जॉन फिन्बे ने विश्वविद्यालय की रिपोर्ट प्रस्तुत की। कुलसचिव प्रोफेसर शिवानी तिवारी द्वारा स्वागत उद्बोधन और डिग्री वितरण प्रक्रिया प्रारंभ करने की अनुमति ली गई। डायरेक्टर आइक्यूएसी प्रोफेसर संजय कुमार ने अंत में सभी का धन्यवाद ज्ञापन किया। इस अवसर पर सभी डिग्री धारकों को डिग्रियां प्रदान की गईं।

22. 29 नवम्बर 2025, ग्लोकल यूनिवर्सिटी में फ्रेशर पार्टी का भव्य आयोजन किया गया। विश्वविद्यालय के प्रांगण में नवागत एवं वरिष्ठ छात्रों ने उत्साहपूर्वक प्रतिभाग करते हुए कार्यक्रम को शानदार रूप प्रदान किया। कार्यक्रम के दौरान छात्रों ने आकर्षक नृत्य एवं मनमोहक गीत प्रस्तुत कर पूरे माहौल को ऊर्जा और उमंग से भर दिया। मंच पर आयोजित मिस्टर एवं मिस ग्लोकल प्रतियोगिता ने सभी का विशेष ध्यान आकर्षित किया, जिसमें विभिन्न राउंड्स के बाद योग्य प्रतिभागियों को सम्मानित किया गया। कार्यक्रम की विशेष आकर्षण रही सेलिब्रिटी आर्टिस्ट गुरुसांज और खुशी, जिन्होंने अपने लोकप्रिय पंजाबी एवं हिंदी गीतों से पूरे सभागार को झूमने पर मजबूर कर दिया। दोनों कलाकारों की सुरीली प्रस्तुति ने माहौल को

ग्लोकल दृष्टि, वर्ष 2, अंक: 3-4, सितम्बर-दिसम्बर 2025

खुशनुमा बना दिया और छात्रों का भरपूर मनोरंजन किया।

23. 9 दिसम्बर 2025, राष्ट्रीय सेवा योजना के कार्यक्रम अधिकारी डॉक्टर शोभा त्रिपाठी और श्री जमीरुल इस्लाम के संयोजन में प्रॉक्टर एवं गैबल कंपनी के सहयोग से छात्राओं को सेनेटरी नैपकिन और छात्रों को जिलेट ब्लेड किट का वितरण किया गया। इस अवसर पर लगभग 1000 छात्रों को तथा 800 छात्राओं को किट प्रदान किए गए।

24. 9 दिसम्बर 2025, ग्लोकल विश्वविद्यालय सहारनपुर, मिशन 5.0 के अंतर्गत छात्र कल्याण अधिष्ठाता संकाय सदस्य डॉक्टर असगर अली के संयोजन में निबंध प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। निबंध का विषय रहा, 'महिला स्वावलंबन एवं सरकारी योजनाएं'। इस अवसर पर छात्र कल्याण अधिष्ठाता डॉक्टर शोभा त्रिपाठी, जनसंपर्क अधिकारी डॉक्टर वाजिद खान, छात्र कल्याण अधिष्ठाता मेंबर मिस शहनाज उपस्थित रही। प्रतियोगिता में 28 छात्र छात्राओं ने सहभागिता की।

25. 25.12.2025, ग्लोकल विश्वविद्यालय सहारनपुर, कार्यक्रम अधिकारी डॉक्टर शोभा त्रिपाठी और श्री जमीर उल इस्लाम के संयोजन में भारत रत्न, पूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय श्री अटल बिहारी वाजपेई जी की महान उपलब्धियों से छात्रों को परिचित कराने हेतु एक प्रेरणादायक कार्यक्रम का आयोजन किया गया। कार्यक्रम के प्रथम सत्र में छात्र-छात्राओं द्वारा उनके जीवन पर प्रकाश डाला गया तथा उनकी रचनाओं का काव्य पाठ किया गया। कार्यक्रम के द्वितीय सत्र में एक व्याख्यान का आयोजन किया गया जिसके मुख्य व्याख्याता विश्वविद्यालय के जनसंपर्क अधिकारी डॉक्टर मोहम्मद वाजिद खान, असिस्टेंट प्रोफेसर ग्लोकल स्कूल रहे। उन्होंने अपने वक्तव्य में कहा कि भारत रत्न माननीय अटल बिहारी वाजपेई भारतीय राजनीति के ऐसे महान व्यक्तित्व थे जिन्होंने विचार, वाणी और व्यवहार - तीनों से राष्ट्र को दिशा दी।

रिपोर्ट

डॉ. शोभा त्रिपाठी
डॉ. मौ. वाजिद खाँ



